शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष: 13 अंक 75 (मूल क्रमांक 132)
जनवरी-फरवरी 2021 मूल्य: ₹ 50.00

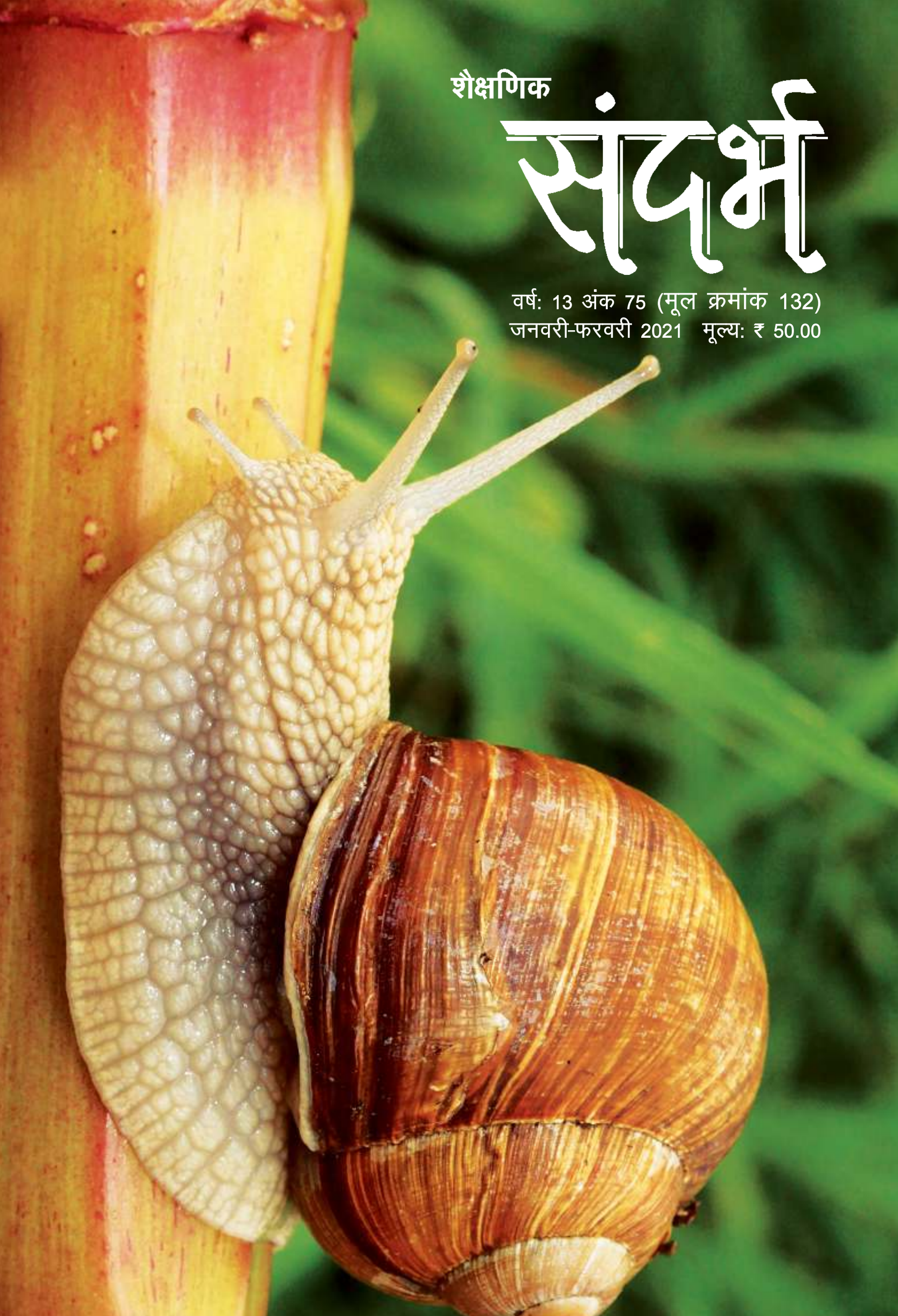

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर

सहायक सम्पादक
पारुल सोनी
कोकिल चौधरी

सम्पादकीय सहयोग
विनता विश्वानाथन
सुशील जोशी
उमा सुधीर

आवरण
राकेश खत्री

वितरण
झनक राम साहू

सहयोग
कमलेश यादव

शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष: 13 अंक 75 (मूल क्रमांक 132)
जनवरी-फरवरी 2021

मूल्य: ₹ 50.00

एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल-462 026 (म.प्र.)
फोन: +91 755 297 7770, 71, 72, 73
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन: sandarbh@eklavya.in
वितरण: circulation@eklavya.in

अब *संदर्भ* आप तक पहुँचेगी रजिस्टर्ड पोस्ट से इसलिए सदस्यता शुल्क में वृद्धि की जा रही है।

सदस्यता शुल्क	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
	450.00	1200.00	8000.00

मुखपृष्ठ: ***घोंघा।*** सममिति यानी सिमेट्री कई पौधों, जन्तुओं और यहाँ तक कि पानी जैसे कुछ अणुओं का भी गुण होता है। लेकिन घोंघे और उसकी कुण्डलित खोल में यह बात नहीं है। इस लेख के द्वारा हम जानते हैं कि कैसे घोंघे के घुमाव की दिशा तय होती है क्योंकि असममिति की शुरुआत एक कोशिका अवस्था में ही हो जाती है। *पढ़िए लेख पृष्ठ 07 पर।*

पिछला आवरण: ***कोरोना काल में मनोस्थिति।*** अध्ययन बताते हैं कि तनाव बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य और सीखने पर गहरा प्रभाव डालता है। कोरोना काल में बच्चों का घरों से बाहर न निकल पाना, लोगों से नहीं मिलना, आसपास का सूनापन और टीवी पर दिन भर कोविड से जुड़ी खबरें देखना - हम सब बड़ों पर असर कर रहा था तो बच्चों पर किस प्रकार असर कर रहा होगा। उपरोक्त लेख इसी मनोस्थिति की चर्चा करता है। *पढ़िए लेख पृष्ठ 47 पर।* ***चित्र*** *- निधिन डोनाल्ड।*

यह अंक त्रिवेणी एजुकेशनल ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित किया जा रहा है।

LINK : Cover 1 - http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Bottle%20Gourd.html
Cover 3 - https://travellingacrosstime.com/2021/02/19/earth-movements-and-their-consequences/

शैक्षणिक

संदर्भ

"संदर्भ अब रजिस्टर्ड डाक से
यानी आप तक पहुँचना सुनिश्चित।"

संदर्भ की सदस्यता दर बढ़ाई जा रही है ताकि संदर्भ रजिस्टर्ड डाक द्वारा आप तक भेजी जा सके

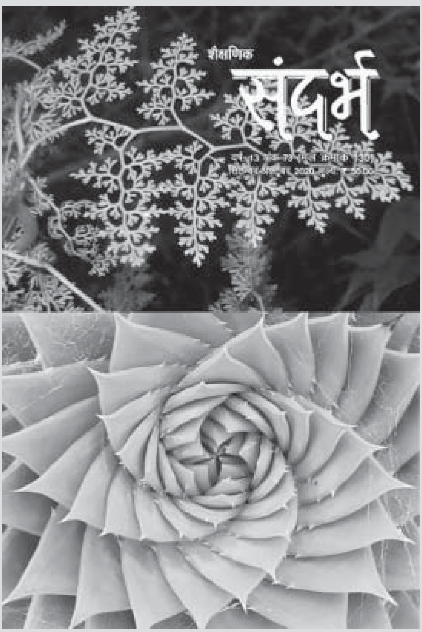

एक प्रति का मूल्य 50 रुपए

सदस्यता शुल्क

एक साल
450 रुपए

तीन साल
1250 रुपए

आजीवन
8000 रुपए

प्रति बाउंड वॉल्यूम
300 रुपए

ई-मेल: pitarakart@eklavya.in

वेबसाइट: www.pitarakart.in

घोंघे की खोल में घुमाव कैसे आता है?

प्रकृति में सममिति यानी सिमेट्री के ढेरों उदाहरण मिलते हैं जो वनस्पतियों, जीव-जगत से लेकर खनिज पदार्थों तक देखे जा सकते हैं। वहीं काफी उदाहरण असममिति के भी मौजूद हैं। इनमें से एक है घोंघे के कुण्डलित खोल। आम तौर पर घोंघे के खोल का घुमाव क्लॉक वाइस या ऐंटी-क्लॉक वाइस होता है। घोंघों पर किए गए शोधकार्य से मालूम हुआ है कि कुण्डली के घुमाव की दिशा अण्डाणु के निषेचन के साथ ही तय हो जाती है। आइए, और गहराई से समझने की कोशिश करते हैं कि यह सब किस तरह होता है।

07

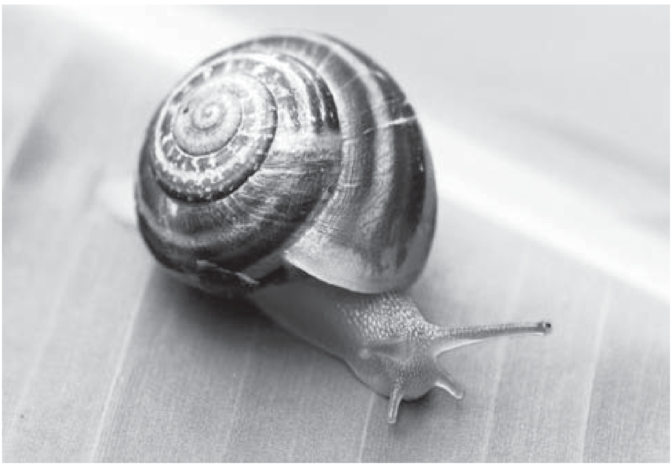

एक फूटा थर्मामीटर और सविनय अवज्ञा

जब कभी चम्पारन सत्याग्रह का उल्लेख होता है तो जबरिया नील की खेती करते किसानों की व्यथा सामने आती है। 19वीं सदी में नील की इतनी अधिक मांग थी कि कृत्रिम नील बनाने की विधि की खोज तेज़ हो गई। आखिरकार सन् 1890 के आसपास यूरोप में वो कृत्रिम विधि मिल ही गई। इस विधि की खोज में थर्मामीटर की क्या भूमिका थी? कृत्रिम विधि और चम्पारन सत्याग्रह के बीच क्या परस्पर सम्बन्ध थे, देखते हैं इस लेख में।

28

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-75 (मूल अंक-132), जनवरी-फरवरी 2021

इस अंक में

05 आपने लिखा

07 घोंघे की खोल में घुमाव कैसे आता है?
विक्की स्टाईन

13 शून्य पर समझ
मनोज कुमार शराफ

21 मेरा रोज़नामचा: शिक्षा के बारे में सीखना - भाग-6
शेषागिरी केएम राव

28 एक फूटा थर्मामीटर और सविनय अवज्ञा
गोपालपुर नागेंद्रप्पा

35 लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार
नंदा शर्मा

43 दायाँ या बायाँ
अंकित सिंह

47 कोरोना काल में बच्चों की मनोस्थिति पर एक नज़र
शशिकला नारनवरे, गुलाबचंद शैलु, सुषमा लोधी

55 अप्रवासी
जेर्राड वीलन

73 इंडेक्स: अंक 127-132

81 चाँद दिन में कहाँ जाता है, सूरज रात में कहाँ जाता है?
सवालीराम

फॉर्म 4 (नियम-8 देखिए)

द्वैमासिक शैक्षणिक संदर्भ के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के सम्बन्ध में जानकारी

प्रकाशन स्थल :	भोपाल
प्रकाशन की अवधि :	द्वैमासिक
प्रकाशक का नाम :	निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026
मुद्रक का नाम :	निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026
सम्पादक का नाम :	राजेश खिंदरी
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026

उन व्यक्तियों के नाम और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है

नाम :	राजेश खिंदरी, निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता :	भारतीय
पता :	एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, म. प्र. 462026

मैं राजेश खिंदरी, एकलव्य यह घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

राजेश खिंदरी, एकलव्य, फरवरी 2021

आपने लिखा

संदर्भ अंक-129 प्राप्त हुआ और मैं इसमें व्लादिमीर हाफकिन के बारे में लिखे गए माधव केलकर के लेख *प्लेग का टीका, हाफकिन और बोतल नम्बर 53 N* को पाकर रोमांचित हो गया। मैंने पाँच दिन पहले तक उनका नाम कभी नहीं सुना था, जब तक इंग्लैंड में मेरी बहन ने मुझे व्लादिमीर हाफकिन पर बीबीसी वेबसाइट के एक लेख का लिंक नहीं भेजा था, जो माधव केलकर के बढ़िया लेख में वर्णित सभी घटनाओं से सम्बन्धित है।

इस लेख में बढ़िया फोटोग्राफ हैं, जिनमें से कुछ को *संदर्भ* के लेख में शामिल किया गया है। मुझे यकीन है कि इसमें आपको रुचि के वेब पेज मिल जाएँगे, आप इसे माधव केलकर के साथ भी साझा कर सकते हैं। लिंक: Waldemar Haffkine: The vaccine pioneer the world forgot*

डेविड हॉप्किंस

अलमोड़ा, उत्तराखण्ड

संदर्भ अंक-108 में रंजना सिंह का लेख *एक चिड़िया की कहानी* पढ़ा जिसमें उन्होंने यह बताया है कि बच्चों को हिन्दी भाषा की ध्वनि, वर्ण और शब्दों का ज्ञान कैसे कराएँ। और यह कि बच्चे अपने घर के वातावरण से बहुत कुछ सीखकर आते हैं। शुरुआती समय में बच्चों से अधिक-से-अधिक संवाद किए जाएँ। उन्हें बोलने, सुनने और अपनी बात रखने का अवसर दिया जाए। इससे बच्चे बहुत कुछ सीखते हैं। इस कहानी में जिस प्रकार एक चिड़िया ने अपने बच्चे को भोजन की व्यवस्था करना सिखाया, ठीक उसी तरह हम भी कक्षा में अपने बच्चों को बोलने, सुनने और कुछ खुद से करने का मौका दें। और जहाँ उनको कठिनाई लगे, उनकी मदद करें।

गीता विश्वकर्मा

भोपाल, म.प्र.

संदर्भ अंक-111 में नरेन्द्र कर्माजी का लेख *मोमबत्ती का अवलोकन* पढ़ा। लेख बहुत अच्छा लगा। अक्सर हम मोमबत्ती का उपयोग दो स्थानों पर ही करते हैं, एक तो जन्मदिन के समय और दूसरा लाइट चले जाने पर। लेकिन जब हमने यह लेख पढ़ा तो पढ़कर लगा कि मोमबत्ती इन दो कार्यों के अलावा विज्ञान के अनेकों प्रयोगों में भी काम आ सकती है। बच्चों के साथ कक्षा में इसे आसानी-से इस्तेमाल कर सकते हैं। मोमबत्ती जलने पर जब मोम पिघलकर गिरता है, उससे हम बच्चों से कुछ आकृतियाँ भी बनवा सकते हैं। विज्ञान प्रयोगों

* *https://www.bbc.com/news/world-asia-india-55050012#:~:text=Working%20in%20Paris%20and%20India,vaccines%20for%20cholera*

द्वारा पढ़ाने वाला विषय है। इसे अन्य विषयों की तरह मौखिक या केवल बोर्ड पर लिखकर नहीं पढ़ाया जा सकता।

साथ ही, मैंने *संदर्भ* अंक-112 में सुमितजी का लेख *मेरी कक्षाएँ और भिन्न* पढ़ा। इसमें उन्होंने कक्षा में बच्चों को भिन्न पढ़ाते हुए अपने कुछ अनुभव साझा किए हैं। इसके लिए वे कई स्कूलों में भी गए। उन्होंने बच्चों के साथ काम के दौरान यह अनुभव किया कि भिन्न गणित की उन अवधारणाओं में से एक है जो बच्चों को बड़ी मुश्किल भरी दुनिया में ले जाती हैं। और उन्होंने यह भी पाया कि भिन्न की समझ इस परिभाषा तक सीमित हो गई है कि कितने हिस्से रंगना है और कुल हिस्से कितने हैं। उन्होंने इस पर बच्चों के साथ जिस तरह से काम किया है, उससे भिन्न को लेकर बच्चों की समझ वाकई पुख्ता होगी।

मनीषा श्रीवास्तव
शा. प्राथमिक शाला, रातीबड़
भोपाल, म.प्र.

संदर्भ अंक-114 में कमलेश चन्द्र जोशी द्वारा रचित लेख *काली और धामिन साँप* पढ़ा। पढ़कर बहुत ही अच्छा लगा। समाज में व्याप्त कुरीतियों को बच्चों के माध्यम से कैसे दूर किया जा सकता है, इसमें इसका बहुत अच्छा वर्णन दिया गया है। इसमें एक शिक्षिका द्वारा किया गया प्रयास बहुत ही सराहनीय दिखा जो बच्चों की अभिव्यक्ति को बहुत ही अच्छे से समझ पाईं। उन्होंने बच्चों को किताबें पढ़ने के विभिन्न मौके बहुत अच्छे से उपलब्ध करवाए। बच्चों से चर्चा करके, उनके मनोभावों को जानकर, चित्र के माध्यम से कैसे किसी किरदार की कल्पना अपने शब्दों में कर सकते हैं, इसे समझा। एक प्राथमिक शिक्षक होने के नाते मेरा यह भी अनुभव रहा कि हमें छोटे बच्चों के साथ जुड़कर ही कुछ नया प्रयास करना चाहिए जिससे वे अपनी प्रतिक्रिया सहजता से व्यक्त कर सकें। इस तरह के अवसर शिक्षक को अपनी कक्षा प्रक्रिया में बुनने होंगे। जैसे लेख की कहानी के माध्यम से बच्चों के विचार जान सकते हैं कि उन्हें कहानी में क्या अच्छा लगा, और क्यों लगा। क्या कक्षा में बच्चों द्वारा किया गया व्यवहार सही था या नहीं, और क्यों? इस बारे में बच्चों के विचार जानकर उन पर बातचीत का प्रयास किया जा सकता है।

रतना चंदेल
शा. प्राथमिक शाला,
मेंडोरा, म.प्र.

संदर्भ अंक-131 में लेख *धोखेबाज़ तितलियाँ* पढ़ा। बहुत ही जानकारीपरक लेख। तितली के बारे में पहली बार इतने विस्तार से जाना। साथ ही, कुछ तितलियाँ ज़हरीली भी होती हैं, यह पहली बार जाना। हिन्दी में अच्छे लेखों को समेटे *संदर्भ* की पूरी टीम को बधाई।

प्रेरणा मालवीय
अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन,
भोपाल, म.प्र.

घोंघे की खोल में घुमाव कैसे आता है?

विक्की स्टाईन

समिमिति यानी सिमेट्री कई पौधों, जन्तुओं और यहाँ तक कि पानी जैसे कुछ अणुओं का भी गुण होता है। लेकिन घोंघे और उसके कुण्डलित खोल में यह बात नहीं है।

ये कायरल (chiral) होते हैं – यानी ये कुछ इस तरह असममित होते हैं कि इनके दर्पण प्रतिबिम्ब को इनके ऊपर जमाया नहीं जा सकता। हॉकी स्टिक, कैंची और जूतों में भी ऐसा ही होता है। हॉकी स्टिक और कैंचियाँ दाएँ हाथ से काम करने वालों और बाएँ हाथ से काम करने वालों के लिए अलग-अलग बनाई जाती हैं। और यदि आपको बाएँ पैर का जूता दाएँ पैर में पहनकर चलना पड़े तो अपने नसीब को कोसिए।

'दक्षिणहस्ती' घोंघे (यानी वे घोंघे जिनकी खोल की कुण्डली नुकीले सिरे से शुरू करके घड़ी की सुइयों की दिशा में घूमती है) का दर्पण प्रतिबिम्ब किसी 'वामहस्ती' घोंघे पर ही फिट बैठेगा, जिसकी खोल घड़ी की उल्टी दिशा में घूमती है। किसी घोंघे के चिपचिपे अंग और हिस्से भी खोल के घुमाव का अनुसरण करते हैं। उनमें भी उसी तरह की ऐंठन होती है जैसे खोल में है। यह एक ऐसा अवलोकन था जिसने कुछ शोधकर्ताओं को इस गुणधर्म के उद्‌गम की खोजबीन करने को प्रेरित किया। और *डेवलपमेंट* नामक शोध पत्रिका में प्रकाशित अध्ययन के मुताबिक इस बुनियादी कुण्डली के

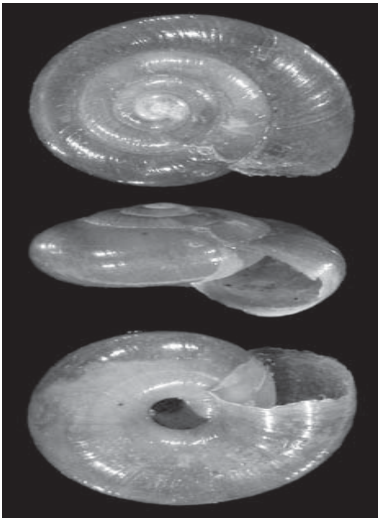

चित्र-1: खोल के तीन दिशाओं के दृश्य- अग्रीय, मुख की तरफ का और तलीय तरफ से।

पीछे एक इकलौते जीन का हाथ है।

उक्त अध्ययन की वरिष्ठ शोधकर्ता जापान के चूबू विश्वविद्यालय की रसायन शास्त्री व परिवर्धन वैज्ञानिक राइको कुरोडा हैं। उनका कहना है कि “ऐसे शारीरिक लक्षण बहुत कम होते हैं, जिन्हें आप (किसी एक जीन में) चिन्हित कर सकें।”

सजीवों के अधिकांश गुणधर्म कई सारे जीन्स से निर्धारित होते हैं। जैसे व्यक्ति की आँख का रंग 10 या उससे भी अधिक जीन्स मिलकर तय करते हैं, जबकि कद का निर्धारण तो कई सैकड़ा जीन्स से निर्धारित होता है। घोंघे का मामला इस अर्थ में दुर्लभ है कि यहाँ एक जीन है जो एक प्रोटीन बनवाता है और यह प्रोटीन इस बात को तय करता है कि कोशिकाएँ अपनी संरचनाएँ कैसे विकसित करती हैं और अन्तत: पूरे घोंघे की अन्दर और बाहर की आकृति को प्रभावित करता है। और तो और, उनकी टीम ने यह भी पाया कि घोंघे की असममित प्रकृति उसकी एक-कोशिकीय अवस्था से ही शुरू हो जाती है।

शोधकर्ताओं ने किया क्या?

तालाबों के बड़े घोंघे (*Lymnaea stagnalis*) लगभग गोल्फ की गेंद के बराबर हो जाते हैं। इसमें लगभग सबमें दक्षिणहस्ती खोल और शरीर पाए जाते हैं लेकिन करीब 2 प्रतिशत घोंघे विपरीत दिशा में कुण्डलित होते हैं।

कुरोडा बताती हैं कि यह घुमाव शोधकर्ताओं को विक्टोरिया काल से ही आकर्षित करता आया है। सन् 2016 में उनकी टीम ने सुझाव दिया था कि शायद एक अकेला जीन (Lsdia1) घोंघे की कायरेलिटी के लिए ज़िम्मेदार होगा। लेकिन उनका ख्याल था कि मामला पूरी तरह तय नहीं हुआ है। पहले किए गए अध्ययनों से भी लगा था कि शायद घुमाव की दिशा का वास्तविक जीन सम्भवत: घोंघे के गुणसूत्रों में Lsdia1 के निकट स्थित है।

दिसम्बर 2015 में जीन सम्पादन की तकनीक क्रिस्पर की खोज के

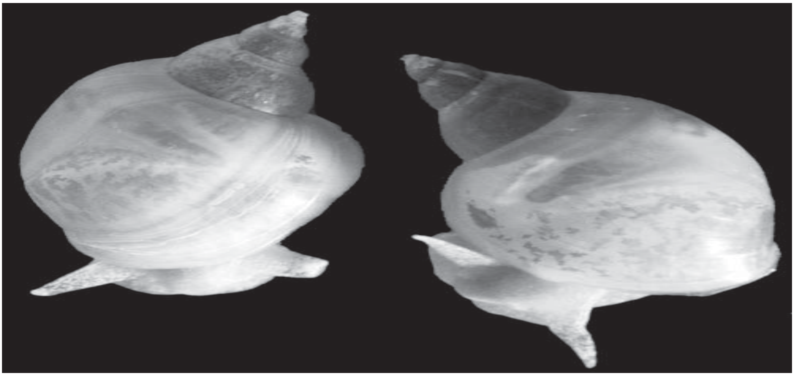

चित्र-2: घोंघों में बस एक जीन नियंत्रित करता है कि उनके खोल और शरीर के बाकी हिस्सों में बाईं या दाईं ओर घुमाव आएगा।

साथ ही यह सम्भव हो गया कि डीएनए के किसी अनुक्रम को सही-सही काटकर अलग किया जा सके। कुरोडा और उनकी टीम ने सोचा कि वे Lsdia1 जीन को ठप करके देख सकते हैं कि क्या इसकी अनुपस्थिति में दर्पण-प्रतिबिम्बनुमा घोंघे का विकास हो सकता है।

सूक्ष्मदर्शी के नीचे शोधकर्ताओं ने घोंघे के अण्डों में क्रिस्पर इंजेक्ट किया। यह एक आणविक कैंची की तरह काम करता है – यह घोंघे के जीन्स में से Lsdia1 को तलाश करके मात्र उसी को काटकर हटा देता है। क्रिस्पर तकनीक के साथ हाल के अनुसंधान से पता चला है कि इसके लक्ष्य से इतर प्रभाव भी हो सकते हैं – यह जेनेटिक सामग्री को वहाँ भी काट सकता है जो शोधकर्ताओं के इरादे में नहीं था। अलबत्ता, उपरोक्त प्रयोग में शोधकर्ताओं ने बताया है कि ऐसे लक्ष्य-इतर जीन्स की क्षति के कोई प्रमाण नहीं हैं। इसकी सटीकता के प्रमाण के तौर पर टीम ने एक अन्य उसी तरह के जीन - Lsdia2 - की जाँच की और पाया कि वह साबुत है। यह महत्वपूर्ण अवलोकन था क्योंकि ये दो जीन्स (Lsdia1 और Lsdia2) फॉर्मिन नामक एक ही प्रोटीन के दो अलग-अलग संस्करण के ब्लूप्रिंट हैं।

फॉर्मिन एक अन्य प्रोटीन एक्टिन के महीन रेशों को व्यवस्थित करने में मदद करता है और एक्टिन फिर जीवन की बुनियादी रचना को गढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक्टिन अधिकांश पादप व जन्तु कोशिकाओं में सबसे अधिक पाया जाने वाला प्रोटीन है।

हारवर्ड मेडिकल स्कूल के कोशिका जीव विज्ञानी टिम मिचिसन

चित्र-3: घोंघों में अण्डे की एकल कोशिका अवस्था में ही माँ के जीन द्वारा यह पहले से ही निर्धारित हो जाता है कि उनमें घुमाव किस दिशा में होगा।

बताते हैं कि फॉर्मिन प्रत्येक एक्टिन सूत्र के सिरे पर विराजमान होता है और उनकी वृद्धि में मदद करता है। वे इस अध्ययन में शामिल नहीं थे।

मिचिसन का कहना है, "आप इसे एक आणविक नृत्य के रूप में देख सकते हैं।" फॉर्मिन जैसे-जैसे एक्टिन सूत्रों का निर्माण करता है, ये सूत्र कोशिका में फैलते जाते हैं। ये सूत्र कोशिका की दीवारों पर दबाव डालते हैं और इस तरह बने उभार हमारे शरीरों को उसकी त्रि-आयामी रचना देते हैं। हमारी कोशिकाओं की आन्तरिक रचना का निर्माण करने के अलावा एक्टिन मांसपेशीय व गैर-मांसपेशीय ऊतकों के संकुचन में भी मदद करता है।

जब क्रिस्पर की मदद से Lsdia1 को काटकर अलग कर दिया गया, तो विकसित होते घोंघे को एक्टिन तन्तु बनाने के लिए पूरी तरह फॉर्मिन के Lsdia2 द्वारा निर्मित प्रोटीन संस्करण के भरोसे रहना पड़ा। और शोधकर्ताओं ने देखा कि Lsdia1 के अभाव में घोंघों की एक पूरी पीढ़ी में वामहस्ती खोलें बनीं। यह वह गुणधर्म है जो प्रकृति में बहुत कम देखने को मिलता है। शोधकर्ताओं ने निष्कर्ष निकाला कि Lsdia1 ही वह जीन होना चाहिए जो घोंघों की खोल को दक्षिणहस्ती घुमाव देता है।

इसके बाद शोधकर्ताओं ने वामहस्ती घोंघों के विकास को थोड़ा और गहराई से परखा। इसके लिए

उन्होंने इनकी सन्तानों पर ध्यान दिया। ऐसा इसलिए किया कि घोंघों का घुमाव उनकी माँ से प्राप्त जीन्स से निर्धारित होता है - यानी वे जीन्स जिन्होंने उस अण्डाणु का निर्माण किया था जिससे वे विकसित हुए हैं। अर्थात जब तक एक इकलौती अण्डाणु कोशिका का निषेचन होता है और वह विभाजित होकर दो कोशिकाएँ बनाती है, तब तक घोंघे के घुमाव की दिशा तय हो जाती है।

कुरोडा ने सचमुच देखा कि असममिति की शुरुआत एक कोशिका अवस्था में हो जाती है।

इसका महत्व क्या है?

कायरेलिटी अणुओं के सूक्ष्म संसार में प्रचुरता से पाई जाती है। पृथ्वी पर जीवन की इकाई बनने वाले सारे अमीनो अम्ल वामहस्ती होते हैं लेकिन व्यापक ब्रह्माण्ड में अमीनो अम्ल वाम और दक्षिण, दोनों प्रकार की हस्तिता में पाए जाते हैं। आपके डाएट सोडा में जो कृत्रिम मिठास होती है, वह एस्पार्टेम हमेशा वामहस्ती होता है। इसका दर्पण प्रतिबिम्ब बेस्वाद होता है।

कुरोडा का शोध कार्य एक अकेले जीन का सम्बन्ध पूरी शरीर योजना से स्थापित करता है और दर्शाता है कि कैसे कायरेलिटी आणविक स्तर से शुरू होकर घोंघे के प्रकट रूप में नज़र आ सकती है।

मिचिसन के अनुसार, “यह जीव विज्ञान की एक रोचक समस्या है। इससे शायद कैंसर का इलाज नहीं होगा और न ही यह वर्षा वनों की रक्षा करेगी। यह तो उन समस्याओं में से है जो अपने आप में जिज्ञासा का विषय है। आज पता नहीं, लेकिन हो सकता है चिकित्सा में इसका कोई उपयोग निकल आए।”

स्वयं मिचिसन इस बात का अध्ययन करते हैं कि कोशिकाओं में एक्टिन जैसी एक अन्य रचना - माइक्रोट्यूब्यूल - स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, कुछ किस्म की कीमोथेरेपी माइक्रोट्यूब्यूल्स को स्थिरता देती हैं या अस्थिर करती हैं। गठिया जैसी कुछ शोथकारी (इंफ्लेमेटरी) बीमारियों का सम्बन्ध माइक्रोट्यूब्यूल्स की बहुतायत से देखा गया है। और एएलएस तथा अल्ज़ाइमर जैसे तंत्रिका विघटन रोगों में तंत्रिका कोशिकाओं में माइक्रोट्यूब्यूल्स का अभाव देखा गया है। इसीलिए उन्हें किसी मूलभूत जीव वैज्ञानिक सवाल का जवाब खोजने मात्र के लिए किया गया अनुसंधान लुभाता है। वे कहते हैं, “कुरोडा वास्तव में यह देखने की कोशिश कर रही हैं कि कैसे निर्माण इकाइयों के स्तर पर कायरेलिटी किसी जीव की कायरेलिटी में प्रकट होती है। इन घोंघों के पास हमें सुनाने को एक अद्भुत कहानी है।”

कुरोडा ने अपना शोध कैरियर एक एक्स-रे क्रिस्टेलोग्राफर के रूप

में शुरू किया था – यानी एक ऐसे रसायनज्ञ के रूप में जो यह देखते हैं कि प्रोटीन व अन्य अणुओं में परमाणु किस तरह जमे होते हैं। हालाँकि, अब उनका काम एक्स-रे विवर्तन से प्राप्त सुगढ़ तस्वीरों की बजाय चिपचिपे घोंघों पर केन्द्रित है, लेकिन आज भी उन्हें यह सवाल लुभाता है कि कैसे अरबों अणु मिलकर कोई क्रिस्टल, डीएनए, प्रोटीन वगैरह बनाते हैं और अन्तत: एक पूरे जीव को आकार देते हैं।

जापान में जहाँ कुरोडा काम करती हैं, वहाँ वे सेवानिवृत्ति की उम्र पार कर चुकी हैं। लेकिन वे कहती हैं कि अभी बहुत कुछ करना बाकी है। लिहाज़ा, उन्होंने अपने उपकरण और घोंघा बस्ती को एक नई प्रयोगशाला में पहुँचा दिया है।

विक्की स्टाइन: वैज्ञानिक लेखक एवं चित्रकार।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख PBS NewsHour के विज्ञान खण्ड, 14 मई 2019 से लिया गया है।

सन्दर्भ:

1. Masanori Abe, Reiko Kuroda - The development of CRISPR for a mollusc establishes the forming Lsdia1 as the long-sought gene for snail dextral/sinistral coiling.
2. Development 2019 146: dev175976 doi: 10.1242/dev.175976 Published 14 May 2019

शून्य पर समझ

मनोज कुमार शराफ

अगर मैं आपसे पूछूँ कि ओ, डक और लव में क्या समानता है, तो आप या तो थोड़ा चुप रहेंगे या कहेंगे कि कुछ भी समानता नहीं या कहेंगे कुछ समानता हो सकती है, पर अभी मुझे सूझ नहीं रहा है। चलिए, आपकी कुछ मदद कर देते हैं। आपने बैडमिंटन के खेल के दौरान रेफरी को 'लव ऑल' कहते ज़रूर सुना होगा। अब आप कुछ-कुछ अन्दाज़ लगा रहे होंगे कि यहाँ 'लव ऑल' का क्या मतलब हो सकता है। थोड़ा आगे बढ़ते हैं और सोचते हैं कि क्रिकेट में कहे जाने वाले शब्द 'डक' के आखिर क्या मायने हैं। अभी भी न समझ में आया हो तो 'ओ' को अँग्रेज़ी में कैसे लिखते हैं, इस पर विचार करें।

हाँ, आप सही समझे, मैं शून्य की ही बात कर रहा था। शून्य जिसे अरबी-उर्दू में सिफर, अँग्रेज़ी में ज़ीरो तथा अमेरिकन लोग 'ओ' या 'नॉट' पढ़ते, लिखते और समझते हैं।

आप इस लेख को जिस कम्प्यूटर या मोबाइल पर पढ़ रहे हैं, वह भी द्वि-आधारित संख्या पद्धति यानी - 'ज़ीरो' और 'एक' के आधार पर चलता है। शून्य के बिना कोई भी आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण मौजूद ही नहीं होंगे। शून्य के बिना

इन उपकरणों से कोई गणना सम्भव नहीं है जिसका अर्थ है कि शून्य के उपयोग के बिना आधुनिक इंजीनियरिंग या स्वचालित मशीनों की कल्पना भी सम्भव नहीं है। वास्तव में, हमारी आधुनिक दुनिया का ज़्यादातर हिस्सा शून्य के बिना अधूरा रह जाएगा।

शून्य एक गेम चेंजर

इस तरह देखें तो मानव द्वारा शून्य की खोज (आविष्कार) एक 'गेम चेंजर' साबित हुआ है। लेकिन क्या आपको पता है कि मानव इतिहास में हज़ारों साल तक शून्य का कहीं अता-पता ही नहीं था। शून्य की अवधारणा आ भी गई तब भी काफी समय तक मानव ने इसे संख्या नहीं समझा। उपरोक्त बातों से एक बात तो तय है कि शून्य प्रकृति-प्रदत्त नहीं है। हमने शून्य का अपनी सुविधा या कहें आवश्यकता-पूर्ति हेतु आविष्कार किया है। और हमें इसे अगली पीढ़ी को भी सिखाना होगा। मैंने सुना है कि वैज्ञानिकों ने विभिन्न शोध में यह पाया है कि कई जानवर, जैसे बन्दर, मधुमक्खी 'कुछ भी नहीं' की अवधारणा को न केवल समझते हैं बल्कि छोटी मधुमक्खी तो अपने दिमाग में शून्य की गणना भी कर सकती है। लेकिन केवल मनुष्यों ने न केवल शून्य की अवधारणा को समझ लिया है बल्कि उसकी सहायता से कई स्वचालित उपकरणों का आविष्कार भी कर लिया है।

शून्य की समझ

तो आइए, जानने की कोशिश करते हैं कि यह अति उपयोगी किन्तु विचित्र शून्य आखिर है क्या।

जब आप इस बात पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि प्रकृति में हम शून्य का सामना शायद कभी नहीं करते हैं। अगर हम शून्य को एक, दो और तीन जैसी संख्याओं की तरह मूर्त चीज़ों से सम्बद्ध कर पाते जैसे एक आम, दो किताब, चार दिशाएँ आदि तो शायद शून्य की हमारी समझ और गहरी होती। हम 'एक' प्रकाश पुंज को देख सकते हैं। हम कार के हॉर्न से 'दो' बीप सुन सकते हैं। लेकिन क्या शून्य को देख या सुन सकते हैं? शायद नहीं! ऐसे में हमें यह समझने के लिए काफी मशक्कत करनी होगी कि किसी चीज़ की अनुपस्थिति भी अपने आप में एक चीज़ है।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय के एक गणित के प्रोफेसर और शून्य पर पुस्तक लिखने वाले रॉबर्ट कपलान कहते हैं, "शून्य दिमाग में है, लेकिन संवेदी दुनिया में नहीं है।" यहाँ तक कि सूने अन्तरिक्ष में भी शून्य नहीं है क्योंकि आप वहाँ तारों को देख सकते हैं। तो इसका मतलब है कि शायद एक सच्चा शून्य - जिसका अर्थ पूर्ण शून्यता है - बिग बैंग से पहले के समय में अस्तित्व में रहा हो लेकिन हम इस बात को कभी

प्रमाणित नहीं कर सकते कि कभी पूर्ण शून्यता की स्थिति भी रही होगी। वास्तव में, शून्य मौजूद नहीं है, फिर भी हम शून्य की अवधारणा का उपयोग अन्य सभी संख्याओं को प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं।

रॉबर्ट कपलान का प्रयोग

सबसे पहले रॉबर्ट कपलान ने एक प्रयोग के माध्यम से शून्य को समझाने का प्रयास किया जिसे गणितज्ञ जॉन वॉन न्यूमैन द्वारा कुछ इस तरह वर्णित किया गया है। वॉन न्यूमैन, रॉबर्ट कपलान के इस प्रयोग का वर्णन सरल किन्तु भ्रामक प्रयोग के रूप में करते हैं।

- यह प्रयोग कुछ इस तरह है कि एक बॉक्स की कल्पना करें जिसमें कुछ भी नहीं है। यह शून्य का भौतिक प्रतिनिधित्व है। चित्र-1 में आप देख सकते हैं कि खाली बॉक्स के अन्दर क्या है। कुछ भी तो नहीं।

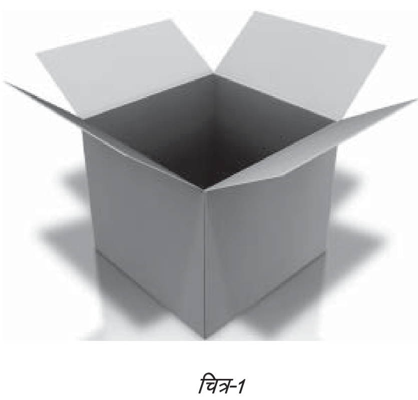

चित्र-1

चित्र-2

- अब एक और खाली बॉक्स लें, और इसे पहले वाले बॉक्स के अन्दर रख दें। अब पहले बॉक्स में कितनी चीज़ें हैं? देखें (चित्र-2) इसमें एक वस्तु है।
- अब इस अन्दर वाले बॉक्स के अन्दर एक और खाली बॉक्स डाल दें। अब इसमें कितनी वस्तुएँ हैं? आप कहेंगे - दो।
- आप देख रहे होंगे कि कैसे हम शून्य से सभी गिनती (संख्या) प्राप्त करते जा रहे हैं, यह सोचने वाली बात है न?

क्या शून्य वास्तव में कुछ भी नहीं है? नहीं! यह हमारी संख्या प्रणाली की जान है।

शून्य एक ही समय में एक अमूर्त विचार और एक वास्तविकता है। कपलान अपने इस प्रयोग के आधार पर शून्य के बारे में कहते हैं, "शून्य हमारे मन-मस्तिष्क में संख्या के संसार को उसी तरह भर देता है

जिस तरह एक खाली केनवास में एक पूरी तस्वीर को उकेरा जा सकता है। यदि आप शून्य को देखते हैं तो आप कुछ भी नहीं देखते हैं। लेकिन अगर आप इसे समझते हैं, तो आप संख्याओं की दुनिया को देखते हैं। यह एक क्षितिज की तरह है जहाँ लाखों-अरबों सितारे टिमटिमाते हैं।

एक बार हमने शून्य होने को आत्मसात कर लिया, तो हमारे लिए ऋणात्मक संख्याओं की समझ भी आसान हो जाएगी। शून्य हमें यह समझने में मदद करता है कि हम गणित का उपयोग उन चीज़ों के बारे में सोचने के लिए भी कर सकते हैं जिनकी मूर्त रूप से या कहें भौतिक वस्तुओं से कोई सम्बद्धता सम्भव नहीं है।

गणित में शून्य क्यों उपयोगी है?

आइए, जानते हैं कि आज के हमारे गणित के लिए शून्य किस तरह से उपयोगी है।

आधुनिक गणित में शून्य का उपयोग दो तरह से हो रहा है।

एक - यह हमारी संख्या प्रणाली में एक महत्वपूर्ण स्थान धारक अंक है: मानव इतिहास में शून्य का पहला उपयोग आज से कोई 5,000 साल पहले प्राचीन मेसोपोटामिया में मिलता है। वहाँ, इसका उपयोग अंकों की एक रस्सी (कुछ-कुछ आज की गिन माला की तरह) में अंकों की अनुपस्थिति को दर्शाने अर्थात उसका प्रतिनिधित्व (represent) करने के लिए किया गया था।

इसे एक उदाहरण से समझते हैं, एक संख्या '103' के बारे में सोचिए। इस संख्या में शून्य 'दहाई कॉलम' में 'कुछ भी नहीं है' के लिए है। अतः यह एक स्थान धारक है, जो हमें यह समझने में मदद करता है कि उपरोक्त संख्या 'एक सौ तीन' है, न कि '13'।

क्या आपको याद है कि रोमनों ने अपनी संख्या कैसे लिखी थी? रोमन अंकों में 103 को CIII लिखते हैं। संख्या 99 को XCIX लिखते हैं। अब आप CIII + XCIX को जोड़ने का प्रयास करें। यह तार्किक ढंग से या आसान विधि से कर पाना सम्भव नहीं है, बेतुका है। शून्य अपने आप में एक उपयोगी संख्या है। लेकिन प्राचीन रोमन लोगों को यह पता नहीं था जिसके कारण उन्हें अपनी संख्याओं के साथ संक्रिया करने में काफी कठिनाई होती थी जैसा कि आपने CIII एवं XCIX के मामले में देखा। शून्य की मदद से स्थानीय मान के आधार पर बनाई गई संख्या प्रणाली के ज़रिए हम आसानी-से संख्याओं को जोड़ने-घटाने का काम कर पाते हैं। यह प्रणाली ज़रूरत पड़ने पर हमें उनमें हेरफेर करने की अनुमति भी देती है यानी उधार लेने, हासिल आने (regrouping) की इजाज़त देती है। स्थानीय मान के आधार पर स्थापित किए गए संख्या

संकेत हमें किसी कागज़ की शीट पर जटिल-से-जटिल गणितीय समस्याओं को हल करने की व्यवस्था देते हैं।

दो - शून्य एक संख्या के रूप में: यदि शून्य केवल एक स्थान धारक अंक ही बना रहता, तो भी यह अपने आप में अति उपयोगी सिद्ध होता। लेकिन लगभग 1,500 साल पहले (या शायद पहले भी), भारत में शून्य एक नम्बर (संख्या) बन गया, जो 'कुछ भी नहीं' को दर्शाता है। उसके बाद मध्य अमेरिका एवं अन्य प्राचीन सभ्यताओं ने भी अपनी संख्या प्रणाली में शून्य को स्वतंत्र रूप से एक संख्या के रूप में मान्यता दे दी।

याद रहे, सातवीं शताब्दी में, भारतीय गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त ने लिखा कि "जब किसी संख्या में शून्य जोड़ा जाता है या किसी संख्या से घटाया जाता है, तो संख्या अपरिवर्तित रहती है; और शून्य से गुणा होने वाली संख्या शून्य हो जाती है।" इस कथन को शून्य के अंकगणित के पहले लिखित विवरण के रूप में मान्यता प्राप्त है।

यूरोप पहुँचने से पहले धीरे-धीरे शून्य मध्य-पूर्व में फैल गया, और 1200 के दशक में गणितज्ञ फिबोनाची ने 'अरबी' अंक प्रणाली को लोकप्रिय बनाया, जिसका हम सभी आज भी उपयोग करते हैं। वहाँ से, शून्य की उपयोगिता का विस्तार हुआ। उस सदी में गणित का एक नया क्षेत्र भी देखा गया जो शून्य के साथ अन्य संख्याओं की गणना पर निर्भर करता है।

शून्य भी एक संख्या

ड्यूक विश्वविद्यालय में मनुष्य और जानवर के दिमाग में संख्याओं की धारणा का अध्ययन करने वाली एक न्यूरोसाइंटिस्ट एलिज़ाबेथ ब्रोंकॉन बताती हैं कि "जब आप 6 वर्ष से छोटे बच्चे को 'शून्य' का अर्थ 'कुछ भी नहीं है' समझाते हैं और जब आप एक बच्चे से पूछते हैं कि कौन-सी संख्या छोटी है, शून्य या एक, तो वे अक्सर सबसे छोटी संख्या के रूप में 'एक' को व्यक्त करते हैं; तब समझ लीजिए कि उनके लिए गणित को समझने का कठिन समय है।"

गणितज्ञ ब्रानोन कहते हैं, "यह सीखना सबसे मुश्किल है कि शून्य एक से छोटा है।"

आइए, इसके लिए ब्रोनोन द्वारा बताए गए एक खेल का हिस्सा बनते हैं। इस खेल का नाम है 'सबसे कम को चुनिए'।

ब्रानोन अक्सर 4 साल के बच्चों के साथ एक खेल खेलते हैं जिसमें वे एक जोड़ी कार्ड को एक मेज़ पर रख देते हैं और प्रत्येक कार्ड पर अलग-अलग चित्र बने होते हैं। मसलन, एक कार्ड पर दो बिन्दु होंगे। तो दूसरे कार्ड पर तीन बिन्दु बने होंगे। चित्र-3 में उनके कार्ड का चित्र आपके

(अ)

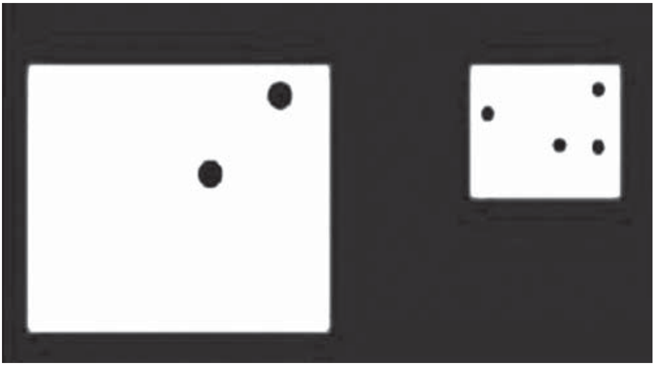

(ब)

चित्र-3: *बच्चों के लिए मेज़ पर रखे भिन्न-भिन्न कार्ड।*

(अ) बच्चों के प्रथम प्रयास के लिए मेज़ पर रखे कार्ड कुछ इस प्रकार हो सकते हैं।

(ब) खेल के अन्तिम चरण के लिए मेज़ पर रखे कार्ड कुछ इस प्रकार हो सकते हैं।

समझने के लिए दिया जा रहा है। फिर बच्चों को सबसे कम संख्या वाले कार्ड उठाने को कहा जाता है। जब तक दोनों कार्ड में कुछ बिन्दु बने होते हैं तब तक बच्चों को चयन करने में कोई परेशानी नहीं होती परन्तु जैसे ही मेज़ पर 'कुछ नहीं' वाला कार्ड और एक बिन्दु वाला कार्ड रखा जाता है, तो आधे से भी कम बच्चों के द्वारा सही उत्तर दिया जाता है। मेरी सलाह है कि किसी कक्षा में बच्चों के साथ या फिर शिक्षकों के साथ आप भी इस खेल को खेलकर देखें। आपको भी आश्चर्य होगा बशर्ते आप शून्य को एक संख्या मानते हों।

शून्य के चार मनोवैज्ञानिक चरण

जर्मनी के संज्ञानात्मक वैज्ञानिक एंड्रियास निडर ने कहा कि शून्य को समझने के लिए चार मनोवैज्ञानिक चरण होते हैं, और प्रत्येक चरण संज्ञानात्मक रूप से पहले की तुलना में अधिक जटिल होता है। धरती के कई जानवर पहले तीन चरणों को किसी-न-किसी तरीके से पार कर जाते हैं। लेकिन अन्तिम चरण उनके लिए सबसे कठिन होता है। या कहें अन्तिम चरण को केवल हम मनुष्य ही पार कर पाते हैं।

पहला चरण संवेदी अनुभव नोटिस करना है। जैसे कोई टिमटिमाती रोशनी जो जल और बुझ रही है। या किसी मोटर के हॉर्न से निकली बीप जैसी आवाज़ जो चालू और बन्द हो रही है, इसे नोटिस करने की क्षमता मनुष्य सहित सभी जानवरों में पाई जाती है क्योंकि यह काफी सरल संवेदी अनुभव है जिसे सभी जानवर महसूस कर सकते हैं।

दूसरा चरण व्यवहारगत समझ यानी प्रतिक्रिया देना है। इस स्तर पर, न केवल जानवर एक उत्तेजना (stimuli) की कमी को पहचान सकते हैं, वे इस पर प्रतिक्रिया भी कर सकते हैं। जैसे जब उन्हें अपनी भोज्य वस्तु की अनुपस्थिति का पता चलता है तो वे किसी अन्य भोज्य पदार्थ की ओर जाना और अन्य भोज्य वस्तु के बारे में जानना चाहते हैं।

तीसरा चरण यह मानना है कि शून्य (या एक खाली कंटेनर), एक से कम मूल्य रखता है। मधुमक्खियों और बन्दरों सहित कई जानवरों के लिए यह मानना थोड़ा मुश्किल है, पर वे इस तथ्य को भी जानते हैं कि शून्य का मूल्य एक से कम है या कहें किसी वस्तु के नहीं होने की बजाय उस वस्तु का होना ज़्यादा मूल्यवान है।

चौथा चरण शून्य को एक प्रतीक के रूप में मानना है। यहाँ एक उत्तेजना की अनुपस्थिति को एक प्रतीक के रूप में मान्यता दी जाती है और समस्याओं को हल करने के लिए एक तार्किक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। मनुष्यों के अलावा अन्य कोई जानवर नहीं है जो जानता हो कि शून्य का एक प्रतीक हो भी सकता है।

लेकिन अच्छी तरह से शिक्षित मनुष्य भी शून्य के बारे में सोचते हुए थोड़ी चूक कर सकता है। अध्ययनों से पता चला है कि वयस्कों को भी अन्य अंकों की तुलना में शून्य को संख्या के रूप में मानने में कुछ ज़्यादा समय लगता है। जब बर्नोन का 'सबसे कम को चुनिए' वाला प्रयोग वयस्कों के साथ दोहराया गया तो वे शून्य और एक के बीच का निर्णय लेते समय, शून्य से एक बड़ी संख्या की तुलना करने के समय से थोड़ा अधिक समय लेते हैं। यानी 1 और 0 की तुलना में लगने वाला

समय, 2 और 3 की तुलना में लगने वाले समय से ज़्यादा होता था।

उपरोक्त बातों से पता चलता है कि शून्य को एक संख्या के रूप में स्थापित करने और उसका मान एक से कम साबित करने के लिए काफी मशक्कत करनी पड़ती है। रॉबर्ट कपलान कहते हैं, "संख्याओं से जुड़ी गणित की सभी संक्रियाएँ शून्य की अवधारणा के चारों ओर नृत्य करती हैं।" हालाँकि, हम शून्य की समझ के साथ पैदा नहीं हुए हैं परन्तु मेरे विचार में एक गणित शिक्षक होने के नाते हम सभी को शून्य की अवधारणा की गहरी समझ होनी चाहिए। हमें शून्य की अवधारणा को समझना ही होगा, भले ही इसमें थोड़ा अधिक वक्त लगे।

मनोज कुमार शराफ: विभिन्न विद्यालय जैसे ट्रिनिटी कॉन्वेंट, विद्या भारती, लायन्स स्कूल तथा डी.ए.व्ही. में गणित शिक्षक के रूप में करीब 27 वर्षों तक अध्यापन कार्य। पिछले तीन वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, रायपुर में बतौर गणित विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत।

ब्रह्मगुप्त, प्रसिद्ध भारतीय गणितज्ञ जिन्होंने शून्य की अवधारणा पर गहनता से काम किया।

मेरा रोज़नामचा: शिक्षा के बारे में सीखना

शेषागिरी केएम राव

"तो क्या," उन्होंने कहा, "तुम छोड़ना क्यों चाहते हो?"
"बच्चे तो हर जगह बच्चे होते हैं," उन्होंने समझाया। मैं सहमत था।
"लेकिन क्या हम इस गैर-बराबर और अन्यायी शिक्षा व्यवस्था से आँखें चुरा सकते हैं?" मैंने पूछा।

- वैली स्कूल में एक बातचीत

मैंने 1995 में वैली स्कूल छोड़ने का फैसला कर लिया। इसलिए नहीं कि मुझे वहाँ मज़ा नहीं आ रहा था। मज़ा तो बहुत आ रहा था। लेकिन कुछ था जो मुझे कचोट रहा था। स्कूल तो ऐसी शिक्षा को अपनाने की भरसक कोशिश करता था जो बच्चे के सर्वोत्तम हित में हो। लेकिन मुझे लगता था कि हम बाकी दुनिया से कटे हुए हैं। शहर से बाहर हरा-भरा, सुन्दर और नैसर्गिक 100 एकड़ का यह इलाका स्कूलों के एक विशाल समुद्र के बीच एक अलग-थलग टापू जैसा था। इनमें से कुछ स्कूल तो एकदम पड़ोस में भी थे। कुछ स्कूल सरकारी थे जो उपेक्षा के गवाह थे। अक्सर उनमें पर्याप्त शिक्षक नहीं होते थे, दीवारें जर्जर थीं और वे काफी मायूसी पैदा करते थे।

मुझे काफी तल्खी से लगता था कि इसके बारे में कुछ करना चाहिए। कभी-कभी मैं सोचता था कि चन्ना क्या करते। मुझे काफी निराशा हुई कि वैली में ज़्यादा लोग इस सवाल से जूझने को तैयार नहीं थे। वे कहा करते थे, "हमें तो अपना घर ठीक-ठाक रखना चाहिए।" यह तो गोल चक्कर में घूमने जैसा था, क्योंकि अपना घर ठीक-ठाक रखने जैसी कोई चीज़ थी नहीं: हमेशा कुछ-न-कुछ अधूरा रह ही जाता है।

रोज़ाना, मैं देखता था कि बच्चे नंगे पैर घाटी पार करके ताटगुणी (Thatguni) स्थित अपने मिडिल स्कूल जा रहे हैं। अधिकांश बच्चे पड़ोस के राचेनमादा (Rachenmada) गाँव के थे जहाँ सिर्फ प्राथमिक स्कूल था। एक बार तो मैं अपने सातवीं कक्षा के बच्चों को राचेनमादा ले भी गया था। कई तो पहली बार किसी गाँव गए थे। वैली में अपने दूसरे साल के दौरान हमने एक छोटा-सा कदम उठाते हुए ताटगुणी और राचेनमादा स्कूलों के छात्रों और शिक्षकों को हमारे विज्ञान

दिवस जलसे में आमंत्रित भी किया था। उन्हें बहुत अच्छा लगा था, रहस्यमयी π दुम भी। उन्होंने यही कहा था। मैं बहुत खुश था।

शिक्षा की यात्रा में बदलाव

मुझे समझ में आने लगा था कि हमारा समाज जिस ढंग से अपने बच्चों को शिक्षा देता है, उसमें गहरी गैर-बराबरी है। इधर मैं था जो एक ऐसे स्कूल में काम कर रहा था जो अपने बच्चों, जो सम्पन्न परिवारों से आए थे, को इतना कुछ देता था। लेकिन हमारे एकदम पड़ोस में ऐसे स्कूल थे जो इतने अलग लगते थे। अन्तर बहुत गहरे थे। मैं एक ऐसे स्कूल में काम करता था जिसका सरोकार यह था कि बच्चे की सम्भावनाओं को अधिक-से-अधिक साकार किया जाए। हमारे इस टापू के बाहर ऐसे कई स्कूल थे, सरकार द्वारा संचालित कई स्कूल थे, जो बच्चे के अन्दर छिपी सम्भावनाओं के प्रति बिलकुल उदासीन थे। और फिर ऐसे स्कूल थे जहाँ बच्चों को अधिक-से-अधिक अंक हासिल करने को हाँका जाता था, जो उनके लिए तथाकथित 'बेहतर जीवन' का पासपोर्ट माना जाता था। मैं भी ऐसे ही एक स्कूल से पास हुआ था। लेकिन वहाँ चन्ना की उपस्थिति ने फर्क पैदा किया था।

लिहाज़ा, मैंने वैली स्कूल छोड़ने का निर्णय लिया। मुझे लगा कि मैं जर्जर दीवारों और टूटे-फूटे फर्नीचर वाले स्कूलों में ज़्यादा उपयोगी रहूँगा; ऐसे स्कूल जहाँ शिक्षण साधन नहीं हैं, जहाँ गरीब परिवारों के बच्चे आते हैं और रट्टा मारकर सीखते हैं या

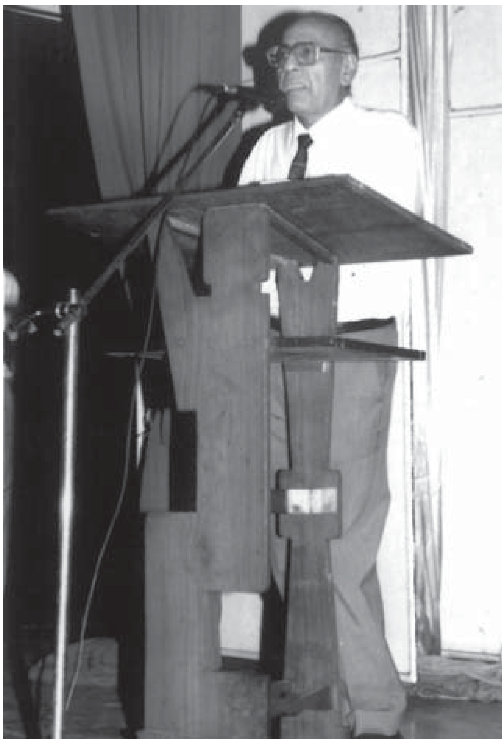

चन्ना बाल्डविन्स में भाषण देते हुए

ज़्यादा कुछ सीखते ही नहीं हैं, या वहाँ इसलिए आते हैं क्योंकि उनके पास कोई और विकल्प नहीं है। मेरे सहकर्मियों ने कहा, "तो क्या? बच्चे तो हर जगह बच्चे होते हैं।" मैंने हामी भरी। लेकिन मेरा सवाल था: क्या हम इस गैर-बराबर और अन्यायी शिक्षा व्यवस्था के बारे में कुछ कर सकते हैं? क्या हम इसे अनदेखा करने का जोखिम उठा सकते हैं?

वैली में बिताए अपने प्रारम्भिक वर्षों का शुक्रिया अदा करते हुए मैंने शिक्षा में अपनी रोमांचक यात्रा जारी रखी। छोड़ने के बाद मेरा पहला पड़ाव था उत्तरी कर्नाटक के रायचूर ज़िले का एक दूर-दराज ब्लॉक। वहाँ मैंने 60 सरकारी प्राथमिक स्कूलों के साथ काम करके गणित व विज्ञान शिक्षण को बेहतर बनाने का प्रयास किया। फिर आई एक किस्म की क्वांटम छलांग। मुझे राष्ट्रीय स्तर पर एक सरकारी कार्यक्रम में काम करने का मौका मिला। इस कार्यक्रम का उद्देश्य देश में सबके लिए प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करना था अर्थात सारे बच्चों को प्राथमिक स्तर तक मुफ्त शिक्षा सुलभ कराना।

हमारे संविधान निर्माताओं ने वचन दिया था कि देश के हर बच्चे को 14 वर्ष की उम्र तक मुफ्त व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान की जाएगी। अलबत्ता, लफ्फाज़ी और हकीकत के बीच अन्तर काफी कठोर होता है। जब आपको पता चलता है कि देश के लाखों बच्चे स्कूल नहीं जा पाते हैं। वे अपने छोटे भाई-बहनों की देखभाल करते हैं, कचरा बीनने का काम करते हैं, रेल्वे स्टेशनों पर गुज़र करते हैं, शोषण-अत्याचार का शिकार होते हैं, फटाके बनाते हैं, अपनी नाज़ुक उंगलियों से कालीन बुनते हैं, ढाबों पर घण्टों काम करते हैं वगैरह।

हम लोग, अपने मध्यम वर्गीय सुरक्षित दायरों में स्कूली शिक्षा को तो सामान्य बात मानकर चलते हैं, गोया यह सब लोगों के जीवन में कुदरती ढंग से होती है। लेकिन ज़रूरत इस बात की है कि हम अपनी आँखें खोलकर देखें कि हमारे आसपास क्या हो रहा है और चीज़ों को ज़्यादा बारीकी-से देखने के लिए खुद को तैयार करें। मैंने यही किया और नंगी गैर-बराबरी देखी।

वैली में हम एक-एक बच्चे से सरोकार रखते थे और खुद को ऐसे वयस्कों के रूप में देखते थे जो बच्चे के जीवन में भूमिका निभाता है। हम अपने विश्वासों, डरों, पूर्वाग्रहों की छानबीन करते थे और जानने की कोशिश करते थे कि इनका हमारी आपसी अन्तर्क्रियाओं और बच्चों के साथ हमारी अन्तर्क्रियाओं पर कैसा असर पड़ता है। जब मैंने व्यापक शिक्षा तंत्र के साथ काम शुरू किया, तो मैंने सीखा कि उन बड़े-बड़े सामाजिक मुद्दों को तत्काल सम्बोधित करने की ज़रूरत है जो बच्चे की पूरी सम्भावनाओं को फलने-

चन्ना अपने अध्ययन-कक्ष में। ध्यान दीजिए, किताबें इधर-उधर जमी हुई हैं।

फूलने से रोकते हैं। मैंने व्यक्तिगत और सामाजिक के बीच के अन्तरंग सम्बन्ध को समझा। यदि शिक्षा को समतामूलक बनाना है, तो सामाजिक पहलू पर तुरन्त ध्यान देने की ज़रूरत है।

मैं आगे बढ़ा और बाल विकास के क्षेत्र में काम कर रहे कुछ अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ लम्बे समय तक काम किया। शिक्षा में मेरा काम जारी रहा - इन संगठनों को परामर्श देकर, उन्हें अपना परिप्रेक्ष्य तथा शैक्षणिक कार्यक्रम विकसित करने में मदद देकर वगैरह। फिर एक समय आया जब मैंने संगठनात्मक सम्बद्धता छोड़ दी और एक स्वतंत्र कार्यकर्ता (फ्रीलांसर) बन गया। इसके बाद देश भर में कई सारे रोमांचक और शिक्षाप्रद काम हाथ में आए। मैंने कई छोटे, बड़े संगठनों के साथ काम किया - शैक्षिक अनुसंधान किया, प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित किए, खूब यात्राएँ कीं और आम तौर पर अपने भरोसे होने का लुत्फ उठाया। पाँच साल बाद मैं एक बार फिर पूर्णकालिक नौकरी में लौटा।

वैली व सरकारी स्कूलों में अन्तर

सरकारी स्कूली तंत्र की प्रकृति पर अधिकाधिक गौर करते हुए मैंने वैली के अपने अनुभव को एक सन्दर्भ बिन्दु की तरह इस्तेमाल किया। इससे एक उपयोगी, हालाँकि कभी-कभी अनुचित, तुलना का साधन मिला। वैली में शिक्षक समय पर आते थे। सरकारी स्कूलों में आप ऐसा मानकर नहीं चल सकते। कई शिक्षक मनमर्ज़ी से आते और जाते हैं। वैली में आप कह सकते थे कि अधिकांश शिक्षक अत्यन्त प्रेरित थे और उन्हें किसी तरह की निगरानी की ज़रूरत नहीं थी। सरकारी स्कूलों में ऐसा नहीं था। यहाँ अन्त:प्रेरणा एक बड़ा मुद्दा था; कुछेक शिक्षक अपवाद थे जिन्हें कुछ कहने की ज़रूरत नहीं पड़ती।

वैली में बच्चे स्कूल छोड़कर नहीं जाते थे। सरकारी स्कूलों में कक्षा-दर-कक्षा ऐसा होता था। खासकर लड़कियाँ और गरीब परिवारों के बच्चे स्कूल छोड़ते थे। स्कूल उन्हें खदेड़ देता था।

वैली में पालक बच्चों के स्कूली जीवन में काफी करीबी से जुड़े होते थे। यही बात आप सरकारी स्कूलों के बारे में नहीं कह सकते। यहाँ पालकों और स्कूलों के बीच कुछ अलग ही खिचड़ी पकती थी। 'शाला प्रबन्धन समितियों' का अस्तित्व सिर्फ कागज़ों पर था और चन्द अपवादों को छोड़ दें तो इनका स्कूल से कुछ लेना-देना न था। बच्चे की असफलता के लिए पालक और शिक्षक एक-दूसरे पर दोषारोपण करते रहते थे। मैं ऐसे अन्तर बताता जा सकता हूँ...।

वैली से निकलने के बाद मैंने सरकार से शिक्षा में काम करवाने की चुनौतियों का सामना करना शुरू किया। शिक्षा में राष्ट्रीय स्तर से लेकर स्कूल तक एक विशाल बहुस्तरीय 'नौकरशाही तंत्र' मौजूद था। हमारी चुनौती यह थी कि इस तंत्र को प्रत्येक बच्चे की शैक्षणिक ज़रूरतों को सम्बोधित करने में समर्थ बनाना। नौकरशाही में हरकत पैदा करना प्रायः हाथी को यू-टर्न करवाने जैसा होता था। अलबत्ता, यह आज भी मेरे काम का एक मज़ेदार पहलू है।

शिक्षा में शिक्षक ही वास्तविक कर्मी हैं। मैं जल्दी ही समझ गया कि नौकरशाही शिक्षकों पर भरोसा नहीं करती। प्रशासक उन पर नियंत्रण रखना चाहते हैं। शिक्षकों को बताया जाता है कि वे क्या पढ़ाएँ, कैसे पढ़ाएँ

लिंकन हॉल के सामने चन्ना अपने छात्रों के साथ, 1972-73 का बैच।

और अन्य कौन-कौन-से काम करें। उन्हें सिखाने के लिए विस्तृत प्रशिक्षण कार्यक्रम हैं। इन प्रयासों में करोड़ों रुपए खर्च किए जाते हैं। मैंने देखा कि उन्हें तैयार करने की आपाधापी में शिक्षक विकास की दूरगामी दृष्टि विकसित करने और क्रियान्वित करने का कोई प्रयास नहीं हो रहा है। अधिकांश समय तो हम ज़ोरदार कदमताल करते रहते हैं।

इन सालों में मैंने समझा है कि हमें शिक्षकों को प्रशिक्षित करने से आगे जाकर कुछ करने की ज़रूरत है। उन्हें एक ऐसा माहौल चाहिए जहाँ वे पेशेवरों के नाते और इन्सान के रूप में विकास कर सकें। उन्हें एक-दूसरे से सीखने के, यह देखने के कि अन्यत्र क्या कुछ हो रहा है, पढ़ने के, लिखने और अपने विचार साझा करने के अवसर चाहिए। और सबसे अहम बात कि अपने विकास में उन्हें परामर्श और मदद की ज़रूरत होती है।

मैं समझ गया कि चन्ना की कहानी शिक्षकों को उनका हक लौटाने का मेरा एक छोटा-सा प्रयास हो सकता है। इसके ज़रिए इस बात को रेखांकित किया जा सकता है कि उनके प्रति एक अलग नज़रिए की ज़रूरत है और महान शिक्षक क्या करते हैं, उससे सीखा भी जा सकता है। याद रखें, विषय, उसका शिल्प और शिक्षक, ये सब आपस में गुँथे हुए हैं। हमें इन सबकी यात्रा करनी होगी।

चन्ना के अन्य छात्रों के कथन

बहरहाल, चलते-चलते एक सवाल और खड़ा हो गया: मैंने सोचा कि

दी रोटरी इनर व्हील, बैंगलोर चन्ना को सम्मानित करते हुए।

क्या मैं अकेला ही हूँ जो चन्ना के बारे में इस तरह महसूस करता है? तो मैंने सोचा, देखा जाए अन्य लोग उनके बारे में क्या कहते हैं। इस सवाल ने कई दिलचस्प वार्तालापों को जन्म दिया।

स्मृतियाँ विचित्र खेल दिखा सकती हैं। और हाँ, मैं हूँ जो समय और स्थान के एक विस्तार में विविध स्मृतियों को सहेज रहा हूँ।

"यहाँ यूएस में नवम्बर का महीना पारम्परिक रूप से कृतज्ञता-ज्ञापन का महीना होता है। मैं इस अवसर पर आपको धन्यवाद देना चाहूँगा कि आप मेरे सर्वोत्तम गणित शिक्षक रहे। आपने रुचि, ज्ञान और करुणा के साथ पढ़ाया और, आपकी बदौलत, मैंने विषय के प्रति एक स्वस्थ प्रेम विकसित किया, हालाँकि मैं कोई निपुण गणितज्ञ नहीं हूँ।"

- किशन भगवान, 1974 की कक्षा

"आपने कई वर्ष पहले 'बाल्डविन बॉयस हाई स्कूल' में मुझे गणित पढ़ाया था। मैं 1974 में किशन भगवान और अन्य छात्रों के साथ पास हुआ था। मुझे आपका ईमेल आईडी किशन से मिला। मुझे पता है, अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हुए यह पत्र बहुत विलम्ब से, लगभग 35 वर्ष विलम्ब से, लिख रहा हूँ। मैं तो बस इतना चाहता हूँ कि आप जानें कि आपके जैसा शिक्षक पाकर मैं धन्य हो गया जिसने हमें विषयों का वास्तविक मूल्य समझाया।

हालाँकि, गणित कभी भी मेरा मज़बूत विषय नहीं रहा, लेकिन आज भी मैं सरल गणनाएँ अधिकांश लोगों की अपेक्षा ज़्यादा तेज़ी-से कर लेता हूँ उन तकनीकों की बदौलत जो हमने केल्कुलेटर से पूर्व के ज़माने में स्कूल में सीखी थीं।

धन्यवाद सर, हमारे जीवन में इतनी अद्भुत उपस्थिति के लिए। आशा करता हूँ आप स्वस्थ और प्रसन्न होंगे। आजकल मैं मुम्बई में रहता हूँ और एक नाट्य लेखक और निर्देशक हूँ। मुझे पता चला है कि आप बैंगलोर में हैं। जवाब देंगे तो बहुत अच्छा लगेगा।"

- महेश दत्तानी, 1974 की कक्षा

शेषागिरी केएम राव: यूनीसेफ, छत्तीसगढ़ में शिक्षा विशेषज्ञ हैं। प्रारम्भिक शिक्षा और बाल्यावस्था में विकास में विशेष रुचि। साथ ही, आधुनिक शैक्षिक मुद्दों पर लिखने में दिलचस्पी।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख *एकलव्य* द्वारा प्रकाशित पुस्तक *द मैन हू टॉट इंफिनिटी* से लिया गया एक अंश है।

एक फूटा थर्मामीटर और सविनय अवज्ञा

गोपालपुर नागेंद्रप्पा

चम्पारन में सविनय अवज्ञा आन्दोलन के बीज जर्मनी में बी.ए.एस.एफ. की प्रयोगशाला में बोए गए थे क्योंकि इतना सस्ता उत्पादन होने के बाद भारत के किसानों को नील का उत्पादन बन्द कर देना पड़ा था।

कभी-कभी कोई एक खोज सामाजिक व राजनैतिक घटनाक्रम पर गहरा असर डालती है। वैसे यह खोज शुरुआत में काफी महत्वहीन लगती है और कभी-कभी तो संयोग से हो जाती है। ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं। आधुनिक भारत के इतिहास में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाक्रम ऐसी ही एक खोज का परिणाम था। एक रासायनिक क्रिया के दौरान संयोगवश एक थर्मामीटर फूट गया। यकीन करना मुश्किल है कि जर्मनी की कम्पनी बी.ए.एस.एफ. की प्रयोगशाला में दुर्घटनावश टूटे एक थर्मामीटर ने भारत में सविनय अवज्ञा आन्दोलन की नींव रखी थी। दरअसल, इस रासायनिक क्रिया का उस समय कोई खास महत्व न था मगर समय के साथ नील (इंडिगो) के उत्पादन से इसका अटूट सम्बन्ध स्थापित हुआ।

नील का इतिहास

भारत के साथ नील का दोहरा

चित्र-1: जर्मनी के ड्रेस्डेन विश्वविद्यालय में मौजूद नील (इंडिगो)।

सम्बन्ध है। पहला तो यह है कि इस रंजक का अँग्रेज़ी नाम इंडिगो इस देश के आधार पर ही पड़ा है। माना जाता है कि नील सबसे प्राचीन प्राकृतिक रंजक है। 4000 वर्ष पूर्व के संस्कृत ग्रन्थों में इसका उल्लेख मिलता है। इसे पत्तियों से तैयार किया जाता था और कपड़े वगैरह रंगने में इस्तेमाल किया जाता था। मिस्र की ममियों के कपड़े भी नील से रंगे जाते थे। प्राचीन काल में भारत से यूरोप में आयातित हर चीज़ को लैटिन में इंडिकम और यूनानी में इंडिकोस कहा जाता था। धीरे-धीरे ये शब्द मात्र नील के लिए प्रयुक्त होने लगे। आगे चलकर यही इंडिगो बन गया। इंडियम एक तत्व भी है। इसका नामकरण इंडिया के आधार पर नहीं बल्कि इस आधार पर किया गया है कि इसके वर्णक्रम में नील (इंडिगो) वर्णक्रम के समान रेखाएँ दिखती हैं।

भारत के साथ नील का दूसरा सम्बन्ध राजनैतिक व सामाजिक है। खास तौर से उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में और बीसवीं सदी की शुरुआत में नील ने भारत के राजनैतिक व सामाजिक जीवन पर काफी असर डाला था। उस इतिहास की बात करने से पहले कृत्रिम रूप से नील के निर्माण पर एक नज़र डालना लाज़मी है।

नील संश्लेषण

बायर व उनके साथियों ने 1865 से शुरू करके 1880 में नील की रासायनिक संरचना पता लगा ली थी। इससे पहले 1868 में बायर के छात्र ग्रीब और लीबमैन एक अन्य प्राकृतिक रंजक एलिज़रीन का संश्लेषण प्रयोगशाला में कर चुके थे। इससे उत्साहित होकर बायर ने नील के संश्लेषण का काम हाथ में लिया

चित्र-2: बी.ए.एस.एफ. कम्पनी में नील का उत्पादन।

और संरचना पता लगने के दो साल के अन्दर संश्लेषण की कई विधियाँ खोज निकालीं। अधिकांश विधियों में संश्लेषण की शुरुआत आर्थो-नाइट्रोसिनैमिक एसिड से होती थी। आर्थो-नाइट्रोसिनैमिक एसिड का निर्माण पर्किन क्रिया के ज़रिए आर्थो-नाइट्रो बेंज़ल्डीहाइड से किया जाता था।

बी.ए.एस.एफ. का प्रवेश

बी.ए.एस.एफ. कम्पनी ने बायर से इन विधियों के अधिकार 1 लाख 20 हज़ार डॉलर में खरीद तो लिए मगर नील का व्यापारिक उत्पादन शुरू नहीं किया क्योंकि कृत्रिम नील की लागत प्राकृतिक नील से कहीं ज़्यादा बैठती थी। अलबत्ता बी.ए.एस.एफ. ने इस प्रोजेक्ट को तिलांजलि नहीं दी थी। इसका ज़िम्मा ह्यूमैन को सौंपा गया। ह्यूमैन ने 1890 में फिनाइल ग्लायसीन और पोटेशियम हायड्रॉक्साइड की क्रिया से नील बनाने की एक व्यापारिक विधि खोज ली। मगर यह भी पर्याप्त कार्यक्षम (लाभप्रद) नहीं थी। आगे चलकर ह्यूमैन ने ही 1893 में एक और विधि खोजी जो व्यापारिक लिहाज़ से अधिक सफल थी। इस विधि में शुरुआती पदार्थ एन्थ्रानिलिक एसिड था। देखा गया कि फिनाइल ग्लायसीन-आर्थो-कार्बोक्सिलिक एसिड का उपयोग ज़्यादा कारगर था और इससे अच्छी मात्रा में नील का उत्पादन होता था। अन्ततः 1897 में इस विधि के आधार पर बी.ए.एस.एफ. ने नील का उत्पादन शुरू किया। पता चलता है कि बी.ए.एस.एफ. ने नील संश्लेषण के विकास पर लगभग 60 लाख डॉलर खर्च किए थे। इससे स्पष्ट है कि नील उत्पादन करके यह कम्पनी कितना मुनाफा कमाने की उम्मीद कर रही थी। बाद में इस प्रक्रिया में और सुधार किए गए और एक ज़्यादा लाभदायक विधि विकसित की गई।

इस पूरे प्रयास में यह साफ हो गया था कि नील उत्पादन में एन्थ्रानिलिक एसिड की भूमिका महत्वपूर्ण है। वैसे आगे चलकर अन्य पदार्थों से भी नील उत्पादन सम्भव हुआ मगर शुरुआती व्यापारिक उत्पादन तो एन्थ्रानिलिक एसिड के दम पर ही सम्भव हुआ था। लिहाज़ा, एन्थ्रानिलिक एसिड का व्यापारिक उत्पादन बहुत महत्वपूर्ण था। इसे सम्भव बनाने में एक दुर्घटना का हाथ रहा। सैपर नाम का एक व्यक्ति नेफ्थलीन को गाढ़े गन्धक के अम्ल के साथ उबाल रहा था, तभी उसने एक थर्मामीटर फोड़ दिया और परिणाम आश्चर्यजनक थे।

टूटा थर्मामीटर

नेफ्थलीन कोल टार में पाया जाने वाला एक पदार्थ है। उन्नीसवीं सदी में यह एक अड़चन से ज़्यादा कुछ नहीं था। रसायनज्ञ नेफ्थलीन का कोई

उपयोग तलाशने में लगे थे। ऐसा ही एक प्रयास यह था कि नेफ्थलीन को गाढ़े गन्धक के अम्ल के साथ ऊँचे तापमान पर गलाया जाए और थैलिक एन्हाइड्राइड नामक पदार्थ बनाया जाए। थैलिक एन्हाइड्राइड एक महत्वपूर्ण औद्योगिक रसायन था। मगर नेफ्थलीन और गन्धक के अम्ल की क्रिया से थैलिक एन्हाइड्राइड पर्याप्त मात्रा में नहीं बनता था। अलबत्ता, लक्ष्य की प्राप्ति एक दुर्घटना से हुई। क्रिया के दौरान सल्फोनीकरण का तापमान नापने के लिए एक थर्मामीटर लगाया जाता था। किसी कारण से यह टूट गया और उसमें भरा पारा क्रियाकारी पदार्थों में जा मिला। अब वही क्रिया कहीं कम समय में और कम तापमान पर सम्पन्न हो गई और बढ़िया किस्म का थैलिक एन्हाइड्राइड पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हुआ। इस तरह से थैलिक एन्हाइड्राइड बनाने की व्यापारिक विधि की 'खोज' हुई।

ह्यूमैन ने इस थैलिक एन्हाइड्राइड को आसानी-से एन्थ्रानिलिक एसिड में तब्दील कर दिया। दरअसल, उक्त प्रक्रिया में जब पारा गिरा तो वह गन्धक के अम्ल से क्रिया करके मर्क्यूरिक सल्फेट में बदल गया। मर्क्यूरिक सल्फेट इस क्रिया में अच्छा उत्प्रेरक साबित हुआ। इस विधि की खोज ने नील उत्पादन की लागत काफी कम कर दी। इस तरह से चम्पारन में सविनय अवज्ञा आन्दोलन के बीज जर्मनी में बी.ए.एस.एफ. की प्रयोगशाला में बोए गए थे क्योंकि इतना सस्ता उत्पादन होने के बाद भारत के किसानों को नील का उत्पादन बन्द कर देना पड़ा था।

तालिका - समय के साथ नील उत्पादन के क्षेत्रफल में बदलाव

वर्ष	क्षेत्रफल (एकड़ में)
1893-94	6,48,928
1896-97	5,82,200
1900-01	3,63,600
1902-03	2,55,500
1905-06	1,70,000

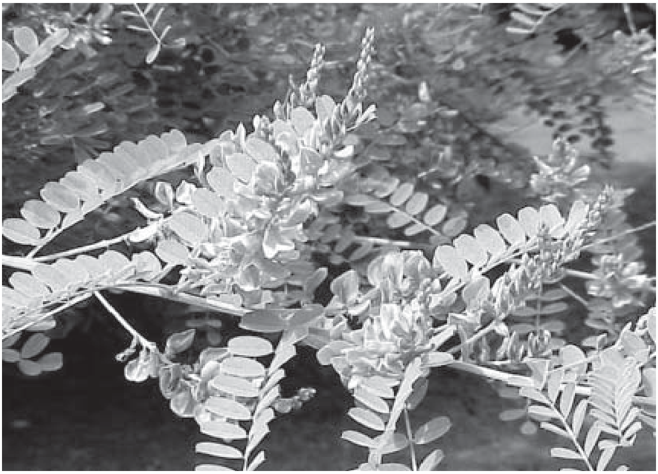

इंडिगोफेरा टिंक्टोरा

चम्पारन

बाज़ार में कृत्रिम नील के आने से पहले नील की फसल *(इंडिगोफेरा टिंक्टोरा)* पर भारत का ही एकाधिकार था। भारत से यह रंजक यूरोप को निर्यात होता था। इस पौधे की पत्तियों से नील प्राप्त करने के लिए पहले पत्तियों को उबालकर उनका सत निकालना होता था और फिर इस सत को कुछ दिनों तक सड़ाया जाता था। नील की खेती और रंजक का उत्पादन बंगाल और बिहार के चम्पारन क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि थी। चम्पारन में खेती का काम रैयत (बटाईदार) द्वारा किया जाता था। कायदा यह था कि बटाईदार उसे दी गई ज़मीन के प्रति बीस काठा (लगभग एक एकड़) में से तीन काठा पर नील उगाएगा। इसे तीनकठिया प्रणाली कहा जाता था।

चम्पारन क्षेत्र में नील उगाने वालों की हालत पर महात्मा गाँधी ने लिखा था:

"मैंने नील के पैकेट तो देखे थे मगर मुझे यह भान तक न था कि चम्पारन क्षेत्र में हज़ारों किसान तकलीफें झेलकर इसका उत्पादन करते हैं।"

"रैयत इतने दलित और भयभीत हैं।"

"तीनकठिया प्रणाली के तहत रैयत अपनी सबसे बढ़िया ज़मीन ज़मींदार की फसल में खपाने को मजबूर है। वह इस फसल के लिए अपना सबसे बेहतरीन समय व ऊर्जा देता है..., नतीजा यह होता है कि उसके पास अपनी फसल, अपनी जीविका के लिए समय ही नहीं बचता।"

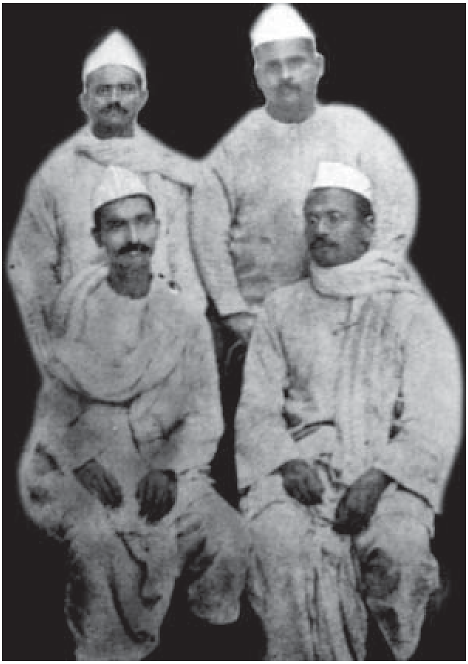

चित्र-3: यह ऐतिहासिक चित्र महात्मा गाँधी के सत्याग्रह आन्दोलन से जुड़े उन सभी मुख्य आन्दोलनकारियों के साथ 1917 में लिया गया था जिन्होंने चम्पारन के सत्याग्रह में भी अहम भूमिका निभाई थी।

"रैयत को अपनी जोत के 3/20 हिस्से पर ज़मींदार की मनचाही फसल बोना पड़ती है। इसके पीछे कोई कानूनी मान्यता नहीं है। रैयत लगातार इसके खिलाफ लड़े हैं और विवश होकर ही यह काम करते हैं। इस सेवा के बदले उन्हें पर्याप्त मेहनताना भी नहीं मिलता। मगर जब कृत्रिम नील के आगमन के कारण स्थानीय माल के भाव गिरे, तो ज़मींदारों ने नील के पट्टे (अनुबन्ध) निरस्त करने के प्रयास किए। इसके लिए उन्होंने एक तरीका खोजा ताकि नील उत्पादन में होने वाला घाटा रैयत पर थोपा जा सके। लीज़ की ज़मीन पर ज़मींदारों ने रैयत से 100 रुपए प्रति बीघा का तवान (यानी क्षतिपूर्ति) वसूल करना शुरू कर दिया। यह तवान नील उत्पादन की विवशता से मुक्ति के एवज में वसूला गया। रैयत का कहना है कि यह वसूली बलपूर्वक की गई। यदि रैयत नकद पैसे का प्रबन्ध न कर सके तो उनसे रुक्के लिखवाए गए, ज़मीनें गिरवी रखवाई गईं और 12 फीसदी ब्याज के साथ किश्तें वसूल की गईं।"

1890 के दशक में कृत्रिम नील के आगमन के साथ ही नील की फसल फीकी पड़ने लगी। यह मुनाफादायक धन्धा अब एक घाटे का सौदा बन गया। बटाईदारों को नील की खेती बन्द करनी पड़ी (देखें तालिका)। मगर इससे तीनकठिया प्रणाली के उनके दायित्व कम नहीं हुए। ऐसा लगता है कि बटाईदारों पर दबाव डाला गया कि वे ज़मींदारों को हो रहे नुकसान की भरपाई करें। नतीजा यह हुआ कि उनकी तकलीफें और बढ़ीं। स्थानीय

सरकार (जो ब्रिटिश शासन के अधीन थी) की कोई रुचि नहीं थी कि रैयत के कष्टों को दूर करे।

सविनय अवज्ञा

1916 तक हालात बदतरीन हो चुके थे। लगभग इसी समय गाँधीजी का ध्यान इस समस्या पर गया। 1917 में रैयत की ओर से हस्तक्षेप करने को वे चम्पारन पहुँचे और फैसला किया कि वे इस स्थित का अध्ययन करेंगे और जाँच करेंगे। सरकार को यकीन था कि इससे इलाके की शान्ति भंग होगी और आगे भी इसके गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। लिहाज़ा, सरकार तत्काल हरकत में आ गई।

गाँधीजी के शब्दों में,

"उसने (पुलिस अधीक्षक के सन्देशवाहक ने) तब मुझे यह नोटिस थमाया कि मैं चम्पारन छोड़कर चला जाऊँ और मुझे अपने निवास (चम्पारन के एक गाँव बेतिया) तक गाड़ी से पहुँचा दिया। मैंने यह लिखकर दे दिया कि मेरा इस आदेश का पालन करने का कोई इरादा नहीं है और जाँच समाप्त होने तक मैं चम्पारन से नहीं जाऊँगा। इस पर मुझे सम्मान मिला कि चम्पारन छोड़ने के आदेश की अवहेलना करने का अपराध कबूल करूँगा। मगर अदालत में हाज़िर होकर सज़ा सुनने से पहले ही मजिस्ट्रेट ने मुझे एक लिखित सन्देश भेजा कि लेफ्टीनेंट गवर्नर ने आदेश दिया है कि मेरे खिलाफ मुकदमा वापिस ले लिया जाए। कलेक्टर ने मुझे लिखा कि मैं अपनी जाँच का काम करने को स्वतंत्र हूँ और मैं सरकारी अधिकारियों से भी मदद ले सकता हूँ। इस प्रकार से देश को सविनय अवज्ञा का पहला प्रत्यक्ष अनुभव मिला।"

तो, जर्मनी की बी.ए.एस.एफ. प्रयोगशाला में संयोग से टूटे एक थर्मामीटर ने सस्ते कृत्रिम नील का मार्ग प्रशस्त किया, जिसकी वजह से बंगाल व बिहार के लाखों लोग अपनी जीविका व आमदनी से हाथ धो बैठे। इससे उत्पन्न हुए कष्ट ने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में सविनय अवज्ञा आन्दोलन को जन्म दिया।

गोपालपुर नागेंद्रप्पा: जैन यूनिवर्सिटी, बैंगलोर में जैविक रसायन के प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष हैं। इनका कार्य मुख्य रूप से रसायन विज्ञान के क्षेत्र में हैं।

यह लेख *स्रोत* पत्रिका के अंक - मई 2003 से साभार।

लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार

नंदा शर्मा

मुझे *एकलव्य* संस्था में काम करते हुए लम्बा अर्सा बीत गया है। संस्था द्वारा तैयार की गई किताबें व विविध सामग्री को देखते-देखते आँखें इतनी अभ्यस्त हो जाती हैं कि कई बार इस सामग्री के आसपास कुछ भी दिखाई देना बन्द हो जाता है। मैं यहाँ बात कर रही हूँ भाषा शिक्षण के लिए तैयार की गई सामग्री की। अक्सर हम लोग प्राथमिक शाला के बच्चों के साथ काम करते समय प्राशिका कार्यक्रम द्वारा तैयार की गई *खुशी-खुशी* पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करते हैं, साथ ही शब्द कार्ड, चित्र-शब्द कार्ड, कविता पोस्टर आदि संसाधनों का इस्तेमाल भी करते हैं।

आम तौर पर हम लोग कक्षा एक से तीन तक में बच्चों की बोलने की झिझक तोड़ने, बच्चों को शब्दों की पहचान करवाने, वाक्य की पहचान करवाने व पढ़े हुए पाठ की समझ बनाने में कविता पोस्टर का काफी

उपयोग करते हैं। बच्चे इन पोस्टर्स में रंग भरने, शब्द पहचानने, पहचाने शब्दों पर गोला लगाने, नोटबुक में वाक्य लिखने, अपनी ओर से कविता को आगे बढ़ाने की गतिविधियाँ सहजता से कर लेते हैं।

लगातार इन कविता पोस्टर्स को देखते हुए अब ये इस कदर याद हो गए हैं कि आधी रात को भी कोई उठाकर किसी भी कविता की एक पंक्ति बोल दे तो मेरी ज़ुबान से अगली पंक्ति निकल जाएगी। बच्चों को भी कुछ ही दिनों में *लालाजी लड्डू दो, धम्मक धम्मक आता हाथी, ऊँट चला, क्योंजी बेटा राम सहाय* आदि कविताएँ याद हो जाती हैं। यह सब देखकर हमें भी यही लगता रहा कि सब सही ट्रेक पर जा रहा है। थोड़ी बोरियत भी होती है, लेकिन इन कविताओं से और क्या कुछ किया जा सकता है, यह मुझे समझ आना शायद बन्द हो गया था।

हमारा घर हमारा विद्यालय

इसी दौरान कोविड-19 की वजह से शालाएँ बन्द हो गईं। जुलाई के महीने में राज्य शासन ने 'हमारा घर हमारा विद्यालय' योजना की शुरुआत की। इस योजना के तहत शिक्षक बच्चों के घर जाकर पढ़ाने का काम कर रहे थे। होशंगाबाद ज़िले के कई गाँवों में हमारे कई साथियों ने गाँव-गाँव जाकर इस योजना में शासन की मदद की। मैं भी कई गाँवों में जाकर बच्चों के भाषा व गणित शिक्षण में मदद कर रही थी।

यहाँ मैं होशंगाबाद के खेड़ला गाँव की प्राथमिक शाला में कविता पोस्टर के सम्बन्ध में मिले नए अनुभव के बारे में बताने वाली हूँ। इस गाँव की दो शिक्षिकाएँ कला मीणा व प्रज्ञा शर्मा 'हमारा घर हमारा विद्यालय' योजना के तहत गाँव के ही एक घर में कुछ बच्चों को पढ़ाने का काम कर रही हैं।

एक रोज़ मैं हमेशा की तरह खेड़ला गाँव गई थी। वहाँ दोनों ही शिक्षिकाओं ने बच्चों को दो समूहों में बाँटकर पढ़ाने का काम शुरू किया। पहले समूह में कला मीणा मैडम कक्षा 1 व 2 के बच्चों को गणित पर काम करवा रही थीं। वहीं प्रज्ञा मैडम कक्षा 3 से 5 तक के पाँच बच्चों के साथ भाषा शिक्षण पर काम करने वाली थीं। चूँकि दूसरे समूह के साथ काम शुरू हो रहा था तो मैं इस समूह के साथ बैठ गई।

कविता पोस्टर के साथ गतिविधि

कक्षा 3 से 5 की शिक्षिका के पास *लालाजी लड्डू दो...* कविता का एक पोस्टर रखा हुआ था। शिक्षिका बच्चों के साथ एक गोल घेरे में बैठ गईं। शिक्षिका का ध्यान कविता पोस्टर पर ही था। वे बार-बार बच्चों को कह रही थीं, "ठीक से पकड़ो, सब को दिखना चाहिए।" शिक्षिका का ध्यान कक्षा-3 के दो बच्चों पर ज़्यादा था क्योंकि

इन दोनों ही बच्चों को पढ़ना नहीं आता था। थोड़ी ही देर में शिक्षिका एक ऊँचे-से डिब्बे पर जाकर बैठ गईं ताकि सभी बच्चों को कविता पोस्टर दिखाई दे। शिक्षिका ने ज़ोर-से कविता का शीर्षक पढ़ा, "*लालाजी लड्डू दो...*।" इसके बाद बच्चों से कहा, "पहले इस कविता पोस्टर में दिए गए चित्रों में रंग भर दो, ताकि पोस्टर सुन्दर दिखाई दे और इसे पढ़ने में और मज़ा आए।" शिक्षिका ने बच्चों के सामने मोम कलर बिखेर दिए। बच्चे कविता पोस्टर के चित्र को बड़े ध्यान से देख रहे थे और आपस में बातचीत भी कर रहे थे।

कोई कहता, "इसमें तो एक-दो चित्र हैं", कोई कहता, "मुझे रंग भरने दो", कोई कहता, "तू लड्डू को भर ले, मैं लाला जी को।" शिक्षिका ने बच्चों की बातचीत सुनकर उन्हें टोकते हुए कहा, "देखो, बारी-बारी से कोई लड्डू में रंग भरेगा, कोई लालाजी के चेहरे पर रंग करेगा, कोई उनके कुर्ते पर रंग करेगा और कोई उनके बालों को, तो कोई उनकी मूँछों को।" मूँछ का नाम सुनते ही बच्चे ज़ोर-से हँस दिए।

एक लड़की ने झट-से काले रंग का मोम कलर उठाया और लालाजी के सर के बालों को रंगने लगी। उसका काम होने पर किसी दूसरे बच्चे ने कुर्ते में लाल रंग भरना शुरू कर दिया, तो किसी ने उनके लड्डू में पीला रंग। अब बारी आई लालाजी की मूँछों की, उसे भी काले रंग से रंगा गया। थोड़ी ही देर में पोस्टर के सभी चित्रों को रंगीन कर दिया गया था।

शिक्षिका ने एक बच्चे को पोस्टर सीधे पकड़कर खड़ा होने को कहा और हाव-भाव के साथ उंगली रखकर कविता सुनाती गईं। कविता खत्म होते ही शिक्षिका ने सभी बच्चों को मौका दिया कि वे कविता को उंगली रखकर पढ़ें। ऐसा लगा, वे चाह रही थीं कि कक्षा 3 के बच्चों को शब्दों की पहचान हो जाए क्योंकि इन बच्चों को पढ़ना नहीं आता था। थोड़ी ही देर में शिक्षिका ने बच्चों से कुछ

सवाल करना शुरू कर दिए।

"लालाजी से बच्चे ने कितने लड्डू माँगे?"

जवाब मिला - चार।

किसी ने कहा, "नहीं एक।"

कविता पोस्टर को एक बार फिर देखकर सही जवाब तक पहुँचा गया।

शिक्षिका ने सवाल किया, "हमारे गाँव में लालाजी किसको कहते हैं?"

एक बच्ची का जवाब आया, "जीजाजी को।"

शिक्षिका ने उसकी बात को दोहराते हुए कहा, "हाँ, जीजाजी यानी दामादजी को भी लालाजी कहते हैं। पर यहाँ तो मिठाई बेचने वाले सेठजी को लालाजी कहा जा रहा है।"

शिक्षिका ने सवाल किया, "बच्चा लालाजी की तारीफ कैसे कर रहा था? क्या आप भी किसी की तारीफ करते हो जब आपको कुछ माँगना होता है?"

बच्चे - जी हाँ, मम्मी की तारीफ करते हैं, दादी की तारीफ करते हैं, पापा की तारीफ करते हैं।

शिक्षिका - मम्मी की तारीफ कैसे करते हो?

बच्चे - मम्मी आप बहुत ही अच्छे गुलाब जामुन बनाती हो।

शिक्षिका - दादी की तारीफ कैसे करते हो?

बच्चा - दादी आप अच्छे भजन गाती हो, मज़ा आ जाता है।

शिक्षिका - आपके घर में लड्डू और गुलाब जामुन कौन बनाता है?

बच्चे - मम्मी

शिक्षिका - तो लालाजी के घर में लड्डू कौन बनाता होगा?

बच्चे - शायद उनकी पत्नी।

शिक्षिका - बच्चे ने लालाजी की किस चीज़ की तारीफ की थी?

बच्चे - मूँछों की।

शिक्षिका - वैसे मूँछ किसकी होती है?

बच्चे - आदमियों की।

शिक्षिका - क्या आदमियों के अलावा और किसी की मूँछ देखी है?

बच्चे - हाँ, शेर की, बिल्ली की, चूहे की।

तभी धीरे-से एक आवाज़ आई, "औरत की।" यह जवाब उस बच्ची ने ही दिया था जो थोड़ी देर पहले शर्माते हुए लालाजी की मूँछों में रंग भर रही थी।

यह सुनकर सब बच्चे ज़ोर-से हँस दिए।

शिक्षिका ने पूछा, "क्या आपने ऐसी कोई औरत देखी है जिसकी मूँछ हो?"

बच्चे थोड़ी देर चुप रहे। फिर एक-दो बच्चों ने झिझकते हुए बताया, "पुरुषों जैसी घनी मूँछ वाली तो नहीं

देखीं लेकिन हल्की-हल्की मूँछ वाली औरतें देखी हैं।"

शिक्षिका ने बच्चों से कहा, "शरीर पर बालों का आना या जाना तो हॉरमोन्स के कारण होता है। ये तो किसी के साथ भी हो सकता है, चाहे आदमी हो या औरत।"

ऐसा लग रहा था कि हम इस चर्चा में और गहराई में जाने वाले हैं। लेकिन उस दिन की कक्षा समाप्त हो गई। हम कक्षा तीन और पाँच के बच्चों के साथ भाषा शिक्षण की कुछेक गतिविधियाँ करवा पाए थे। लेकिन कविता पोस्टर से और क्या हासिल हो सकता है, इस उधेड़बुन में उलझकर मैं अपने ऑफिस वापस आ गई। रह-रहकर ऐसा लग रहा था कि आज कुछ हासिल होते-होते रह गया था। परन्तु क्या हासिल नहीं हो पाया, यह समझ नहीं आ रहा था।

इन्हीं मनोभावों में गोते लगाते हुए मैंने अपने एक मित्र को फोन लगाकर इस अनुभव के बारे में बताया। मेरे मित्र ने बताया कि उनके एक अन्य मित्र ने लालाजी का कविता पोस्टर करवाते हुए बच्चों से बोला कि मान लो आज लालाजी के पेट में दर्द हो रहा है, इसलिए दुकान पर लालाजी की पत्नी बैठी हैं, तो लालाजी की पत्नी को ध्यान में रखते हुए कविता

में बदलाव करो और हम सबको वो कविता सुनाओ। कुछ बच्चों ने तुरन्त लालाजी का ललाईन कर दिया, लेकिन तारीफ किस बात की करें, इस पर जाकर रुक गए। कुछ बच्चों ने कहा, "लालाजी बीमार हैं तो उनका बेटा दुकान में बैठा दिया जाए।" इस बदले हुए कविता पोस्टर की पूरी बात न बताते हुए, मैं इसे यहीं रोक रही हूँ। मुझे दरअसल, इस बातचीत से एक नई दिशा मिल गई थी।

लालाजी के लड्डू ने खोली चर्चा

मैं एक बार फिर खेड़ला गाँव की प्राथमिक शाला के बच्चों के साथ मिलना चाहती थी इसलिए जल्द ही बच्चों के पास लालाजी के कविता पोस्टर के साथ जा पहुँची। पिछली बार ही हमने पोस्टर में रंग भरने की और शब्दों सम्बन्धी कुछ गतिविधियाँ कर ली थीं। इसलिए पिछली चर्चा की याद दिलवाते हुए हमने उसी चर्चा को आगे बढ़ाने का निश्चय किया। मेरे साथ प्रज्ञा मैडम व कला मीणा मैडम थीं।

चर्चा यहाँ से शुरू हुई, "लालाजी की दुकान पर यदि लालाजी बीमार हों और लालाजी की पत्नी बैठी हों तो क्या हो?" बच्चे सहजता से इस बदलाव को मानने को तैयार नहीं थे।

शिक्षिका - अपने गाँव में कितनी किराने की दुकानें हैं?

बच्चे - किराने की तीन दुकानें हैं।

शिक्षिका - उन दुकानों पर कौन बैठता है?

बच्चे - चाचा बैठते हैं या आदमी बैठते हैं।

शिक्षिका - क्या इन दुकानों पर औरतें भी बैठती हैं?

तुरन्त जवाब आया – नहीं।

एक बच्ची ने कहा - हमारी किराने की दुकान है। हमारे पापा जब खेत जाते हैं या खाना खाने जाते हैं तो हमारी मम्मी थोड़ी देर के लिए दुकान में बैठती हैं।

हमें समझ आ गया था कि इन औरतों की भूमिका एक रिलीवर जैसी है, प्रमुख दुकानदार की घण्टे भर की अनुपस्थिति में दुकान के माल की सुरक्षा व ग्राहकी चलाना – बस इतना करना है।

शिक्षिका ने आगे सवाल किया, "ऐसी कौन-सी दुकानें हैं जहाँ आदमी दुकान चलाते हैं और ऐसी कौन-सी दुकानें हैं जिन्हें औरतें चलाती हैं?"

बच्चे - किराना दुकान, नाई की दुकान, जूते-चप्पल की दुकान, खाद-बीज की दुकान, कपड़े की दुकान आदमी चलाते हैं। कुछ बच्चों का मानना था कि ज़्यादातर दुकानों को आदमी ही चलाते हैं। औरतें श्रृंगार की दुकान, सब्ज़ी की दुकान, ब्यूटी पार्लर, फूल-बेलपत्री-नारियल की दुकान (नर्मदा नदी के किनारे पर) चलाते हुए दिखाई देती हैं।

शिक्षिका ने बच्चों के सामने फिर एक सवाल रखा, "अगर ऐसा हो कि सारी दुकानों को महिलाएँ चलाएँ तो ठीक रहेगा?"

कुछ बच्चों ने कहा कि सारी दुकानों पर औरतें होंगी तो उन्हें बाज़ार जाने में असहजता होगी। सब ओर औरतें ही दिखेंगी।

हमें लगा कि इन बच्चों ने सवाल को ठीक-से समझा नहीं है। इसलिए दोबारा बताया कि "अभी जैसे हम माँ-पिता-चाचा-मौसी-बुआ के साथ बाज़ार जाते हैं वैसे ही जाएँगे लेकिन दुकानदार कोई पुरुष न होकर महिला होगी। इतना ही फर्क है।"

दो बच्चों ने कहा, "हाँ, हमें कोई समस्या नहीं। बाज़ार में कमीज़ खरीदना है। वो औरत दुकानदार दे या आदमी। कोई दिक्कत नहीं।"

एक बच्चे को अभी भी सारी महिला दुकानदार होने से दिक्कत महसूस हो रही थी। लेकिन वह खुलकर बता भी नहीं पा रहा था कि क्या दिक्कत है। काफी देर बाद उसने कहा, "मम्मी लोग दुकान पर बैठेंगी तो पापा लोग क्या करेंगे?"

शिक्षिका ने कहा, "पापा लोग खेत में काम करेंगे, घर के काम करेंगे, खाना बनाएँगे।"

एक-दो बच्चों ने कहा, "पापा लोग को तो खाना पकाना आता नहीं।"

शिक्षिका ने कहा, "पापा लोग खाना पकाना सीख लेंगे। क्या अभी आपके आसपास कोई ऐसा आदमी है जो झाड़ू लगाना, खाना बनाना वगैरह काम करता हो?"

बच्चों ने दो उदाहरण बताए लेकिन वो पत्नी की मृत्यु के बाद अकेले पड़े पुरुषों के थे।

शिक्षिका ने पूछा, "महिलाओं और पुरुषों के काम फर्क-फर्क क्यों हैं?"

किसी बच्चे ने सकुचाते हुए कहा, "कुछ काम में काफी ताकत की ज़रूरत होती है।"

यहाँ शिक्षिकाओं ने बताया, "यह हमारा वहम है कि औरतों का शरीर कमज़ोर है। औरतें भी ट्रेक्टर, ट्रक, ट्रेन, हवाई जहाज़ चला सकती हैं। तुम्हारे स्कूल को भी पाँच महिला शिक्षिका ही चला रही हैं। सभी को सब काम करने के मौके मिलना चाहिए।"

यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते हमने एक बार लालाजी के पोस्टर को देखा। ऐसा लग रहा था कि लालाजी अभी हाथ बढ़ाकर हम तीनों मैडमों को लड्डू दे देंगे।

इस बातचीत से बनी जो समझ

लालाजी के पोस्टर के मार्फत आज हम रोज़गार के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी के मुद्दे को छू पाए थे। बच्चों के दिमाग में बने स्टीरियोटाइप को भी समझ पाए कि वे किसी दुकान में दुकानदार के रूप में पुरुषों को देखने के इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि थोड़े समय के लिए ही किसी दुकान पर महिला दुकानदार को बैठाने की कल्पना मात्र से असहज हो उठते हैं। पिताजी क्या करेंगे, जैसे खयाल दिमाग में चलने लगते हैं।

अभी भी इस पोस्टर में चर्चा की सम्भावना है। लालाजी की दुकान में काम करने वाले कारीगर, वेटर, उनका काम, उनका वेतन, लालाजी का कर्मचारियों से व्यवहार आदि आदि। ये सब ऐसे अनुभव क्षेत्र हैं जिनसे मूँछों की तारीफ सुनकर लड्डू देने वाले लालाजी से लेकर बच्चों से श्रम करवाते लालाजी तक के अनुभव कक्षा में आ सकते हैं। इसलिए कविता पोस्टर सिर्फ भाषा शिक्षण तक सीमित न रहकर, कई सामाजिक ताने-बाने को परखने का मौका भी देता है।

हमारे कविता पोस्टर्स में भाषा शिक्षण के साथ-साथ सामाजिक सवालों को खोलने की, चर्चा की भी भरपूर सम्भावना है। आखिरकार भाषा हमारे जीवन, हमारे तमाम अनुभवों को व्यक्त करने के साथ-साथ उन पर सोच-विचार करने का भी तो ज़रिया है।

नंदा शर्मा: *एकलव्य* के जश्न-ए-तालीम कार्यक्रम में बतौर ब्लॉक समन्वयक होशंगाबाद में काम कर रही हैं। होशंगाबाद में रहती हैं।

शासकीय प्राथमिक शाला, खेड़ला, होशंगाबाद में पदस्थ प्रज्ञा शर्मा मैडम व कला मीणा मैडम ने बच्चों से बातचीत में जो मदद की, इसके लिए विशेष आभार।

दायाँ या बायाँ

अंकित सिंह

आनंद निकेतन स्कूल एक ऐसा स्कूल है जहाँ सभी को सोचने-विचारने और तर्क करने की आज़ादी है। यह आज़ादी कक्षा से लेकर प्लानिंग बोर्ड तक और किचन से लेकर झूले तक दिखाई और सुनाई पड़ती है। ऐसी ही एक गणितीय आज़ादी की लड़ाई का ज़िक्र मैं अपने इस लेख में करने वाला हूँ। इस लेख का नाम 'दायाँ या बायाँ' क्यों है, वो आप इस लेख को पढ़ते हुए समझ पाएँगे।

कक्षा-4 की गणित की कक्षा में सभी बच्चे तीन अंकों के गुणा के सवाल को हल करने में लगे हैं और सभी बच्चे अपने सवालों को जैसे उन्होंने हल किया है, वैसे ही ब्लैक बोर्ड पर समझाते हैं।

यहाँ पर बच्चों द्वारा किए गए हल देखिए और आपको कौन-सी विधि सही लगती है, सोचिए। और अपने साथी शिक्षकों से इस पर बातचीत भी कीजिए।

गुणा नए तरीके से

अभी तक तो सारी क्लास सही चल रही थी पर हमारे नन्हे मेहमान जावेद (जो गुजरात से आया था और वहाँ के स्टेट बोर्ड स्कूल में कक्षा-5 का छात्र था) ने जब अपने तरीके से बोर्ड पर सवाल हल करके दिखाया तो सवालों की झड़ी लग गई।

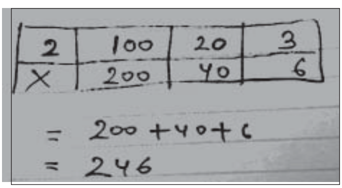

यह हल क्लास की एक बच्ची शुचि द्वारा किया गया है।

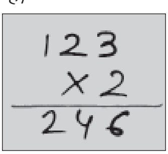

यह हल क्लास की एक बच्ची जन्नत द्वारा किया गया है।

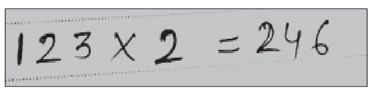

यह हल कक्षा के 9 साल के एक छात्र अंश द्वारा किया गया है।

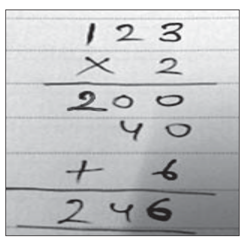

जावेद का तरीका

इस तरह से मुझे भी बातचीत का एक नया मुद्दा मिला और एक नया आयाम मिला, मैंने खुद से इस विषय पर चिन्तन किया था पर बच्चों के साथ इस तरह की बातचीत कभी नहीं हुई थी।

दाएँ से या बाएँ से?

इस विधि में जावेद ने जब बाईं तरफ से गुणा करना चालू किया तो कक्षा में उपस्थित समस्त बच्चों ने “गलत-गलत” कहना चालू कर दिया। तो जावेद ने कहा, “आप सब लोग देखिए, वही उत्तर मेरा भी है जो आप लोगों का है।” इस पर सभी बच्चों ने कहा, “आपने उत्तर तो सही ला दिया है पर तरीका गलत है।” तो जावेद ने कहा, “हमको हमारे स्कूल में ऐसे ही सिखाया है तो ये गलत कैसे हुआ?” तब भी बच्चों ने नहीं माना।

मैंने बच्चों से पूछा, “आपको क्या लगता है, जावेद का उत्तर गलती से आया है? अगर हाँ, तो क्यों न हम उसे दूसरा सवाल देकर देखें और आप लोग भी उस सवाल को करें? और इस बार सवाल है 123x12.”

सभी बच्चों ने सहमति दी और हम अगले सवाल की तरफ बढ़े।

मैं यहाँ बाकी सब बच्चों के कॉमन जवाब और जावेद के उत्तर को साझा कर रहा हूँ।

इन दोनों ही तरीकों पर फिर बातचीत चालू हुई। जहाँ अन्य बच्चों का तरीका जावेद को समझ नहीं आ रहा था, वहीं जावेद का तरीका बाकी बच्चों को समझ नहीं आ रहा था।

यह बात तो समझ आ रही थी कि जावेद का तरीका भी कारगर था क्योंकि उस तरीके से भी सही उत्तर आ रहे थे। हमने और सवाल भी करके देखे।

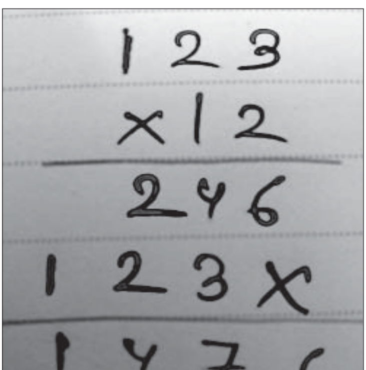

सामान्य तरीका

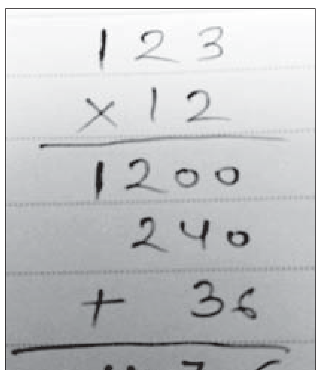

जावेद का तरीका

इस दाएँ और बाएँ की उलझन में हम इन दोनों तरीकों को खोलने के रास्ते पर आगे बढ़ गए।

हम लोगों ने 'गुणा क्या है', इस पर बातचीत करना शुरू की। प्रथमेश ने कहा, "जब किसी संख्या को बार-बार जमा करते हैं तो गुणा करते हैं जैसे 2 रुपए 3 बार गुल्लक में डालें तो 2 गुणा 3 हुआ।" ऐसे ही अंश ने कहा, "जैसे एक चीज़ की कीमत दी गई हो और ज़्यादा चीज़ों की कीमत बताना हो तो भी गुणा करते हैं।" जावेद ने भी सभी के साथ सहमति जताई।

तब मैंने कहा, "क्या कोई मुझे शुचि के तरीके को समझा सकता है कि उसने क्या किया है?"

सभी बच्चों ने एक ही स्वर में कहा कि उसने हर नम्बर को 2 बार जमा किया है।

तब मैंने एक और प्रश्न दिया, "अगर शुचि 100 से शुरू न करके 3 से शुरू करती तो क्या होता?" तो एक बच्चे ने कहा, "क्यों न हम करके देखें?"

बच्चों ने जो किया वह इस तरह से था

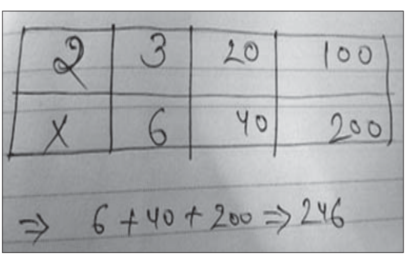

कुछ बच्चों ने ऐसे भी किया।

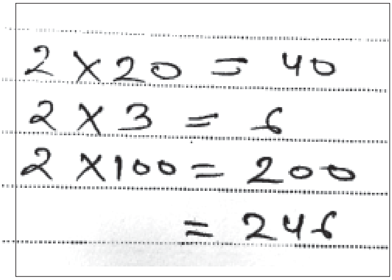

विधि अलग, उत्तर वही

इसी तरह हम कई सारे सवालों से गुज़रे जिनको हमने इस तरह से करके देखा। इन सवालों को करते समय हम लगातार बातचीत कर रहे थे कि इसमें हो क्या रहा है, जैसे 123x2 के सवाल में 100 जो कि सैकड़ा के स्थान पर है, उसे दो गुना करने पर 200 हो जाता है, इसी तरह 20 जो कि दहाई के स्थान पर है, उसे दो गुना करने पर वो 40 हो जाता है। इसी तरह 3 जो कि इकाई के स्थान पर है, उसे दो गुना करने पर वह 6 हो जाता है।

बातचीत करते हुए हमने समझा कि इस बात से उत्तर में कोई अन्तर नहीं आ रहा था कि हम गुणा दाईं तरफ से शुरू करें या बाईं तरफ से। या फिर बीच में कहीं से। हमें दिए गए अंक को एक निश्चित मात्रा में गुणा करना है, फिर किसी भी क्रम में जोड़ने पर उत्तर वही मिलता है।

इसी क्रम में बच्चों ने गुणा के

काफी सारे सवालों को अलग-अलग क्रम में करके देखा, कुछ ने और नए तरीके सामने रखे।

जैसे 22x7 के सवाल में एक बच्चे ने 22x10 करके उसमें से 22x3 घटा दिया।

इन्हीं सवालों के क्रम में आगे बढ़ते हुए अंश ने सवाल किया, "बाकी चीज़ों जैसे जोड़, घटाना में भी आगे या पीछे से शुरू करने पर क्या वही उत्तर आएगा?" तो मैंने कहा, "क्यों न इन्हें भी करके देखा जाए।" मैंने व्यक्तिगत तौर पर भी गणितीय क्रियाओं को इस तरह से हल करके देखा। आप भी इन्हें करके देखिए और अपना अनुभव साझा कीजिए।

इस अनुभव को साझा करने के पीछे का उद्देश्य यह है कि एक शिक्षक के तौर पर हम गणित की परम्परागत विधियों से हटकर सोचने की कोशिश करें और अपने साथी शिक्षकों से बातचीत करें कि उनके बचपन या उनके क्षेत्र में किसी विशेष विषय को कैसे समझाया जाता है। इससे हमें सामान्य गणितीय विधियों और तौर-तरीकों के दायरे से बाहर निकलकर बुनियादी अवधारणाओं और वैकल्पिक विधियों को भी समझने का मौका मिलता है।

अंकित सिंह: 2016 से 2020 तक आनंद निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल से जुड़े रहे हैं। छः साल से बारह साल के बच्चों के साथ मुख्यतः गणित की अवधारणाओं पर काम करते हैं। साथ ही, आठ से दस साल के बच्चों के साथ विज्ञान की आधारभूत अवधारणाओं के लिए गतिविधियाँ करते रहे हैं। वर्तमान में डी.पी.एस., भोपाल में गणित शिक्षण कर रहे हैं।

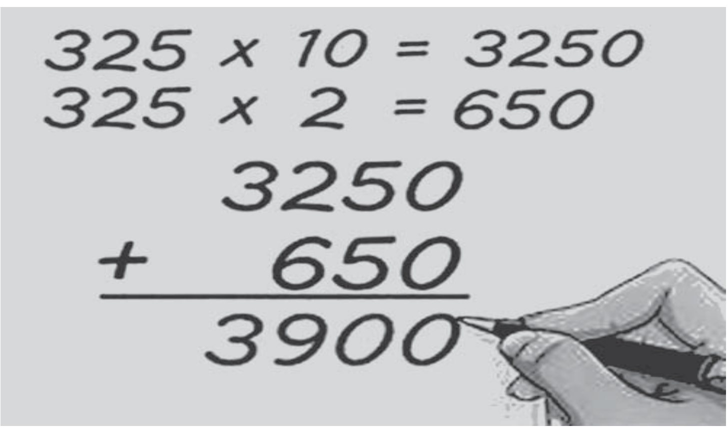

कोरोना काल में बच्चों की मनोस्थिति पर एक नज़र

शशिकला नारनवरे, गुलाबचंद शैलू, सुषमा लोधी

परिचय

घरों से बाहर न निकल पाना, लोगों से नहीं मिलना, आसपास का सूनापन और टीवी पर दिन-भर कोविड से जुड़ी खबरें देखना जब हम सब बड़ों पर इतना असर कर रहा था, तो यह सब बच्चों पर किस प्रकार का प्रभाव डाल रहा होगा! अध्ययन बताते हैं कि तनाव बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य और सीखने की प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव डाल सकता है। तनावपूर्ण परिस्थितियों में जीने से बच्चों में बेचैनी, डर, मूड ऊपर-नीचे होना और अन्य मानसिक बीमारियों से ग्रसित होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

इस बारे में और जानने के लिए हमने अपने घर के आसपास के बच्चों से बात की, साथ ही हमारे काम के क्षेत्र की बस्तियों में फोन के माध्यम से सम्पर्क किया और जब हमारे साथी राशन देने के लिए जाते, उनसे पता लगाने की कोशिश की, कि वहाँ पर क्या स्थिति है। बात करके यह तसल्ली हुई कि बस्ती में रहने वाले बच्चे कम-से-कम ऐसी बसाहटों में

रहते हैं जहाँ आसपास एक-दूसरे से मिल सकते हैं, खेल सकते हैं और बातें कर सकते हैं, कम-से-कम वे डर व शक की एक अलग ही श्रेणी में नहीं रह रहे हैं। लेकिन उनकी आर्थिक स्थितियाँ भी उन पर अलग तरह का विकट असर डाल रही थीं।

एक माह के बाद जब खुद बच्चों से मिलने निकले तो उनके मन की स्थिति को समझा और उसमें कुछ हस्तक्षेप करने की कोशिश भी की, जिससे बच्चे सामान्य हो पाएँ। हमारे लिए ज़रूरी था कि हम बच्चों को उनके मन की बातों को बाहर निकालने का अवसर दे पाएँ और साथ ही एक सकारात्मक हस्तक्षेप की कोशिश भी करें।

हमने छोटे-छोटे समूहों में बच्चों से लिखवाकर, चित्र बनाकर और मौखिक रूप में (विशेष तौर पर जो बच्चे लिख नहीं पाते) अपनी बातें अभिव्यक्त करने के अवसर बनाने की कोशिश की। जब भी बस्ती जाते, तो बच्चों से व्यक्तिगत बातें भी करते, बीच-बीच में बच्चों से फोन पर भी बातें करके उनसे जुड़ाव बनाए रखने की कोशिश करते। उनके माँ-बाप और परिवार से भी मिलना शुरू किया और उनकी परिस्थितियों को जाना। बाल मेले भी किए। बाल मेले एवं लाइब्रेरी कार्यक्रम के दौरान बच्चों ने टोपी बनाना, ऑरिगेमी से कागज़ के खिलौने बनाना और कहानी सुनाने जैसी मनोरंजक गतिविधियों में भाग लिया और खूब खुश हुए। हमने जून से सितम्बर 2020 के दौरान भोपाल की 6 कच्ची बस्तियों में बच्चों से मिलते हुए उनके मन में चल रही बातें सुनीं जिससे हम अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि बच्चे किस तरह की मानसिक स्थिति में रह रहे हैं।

एक बच्चे ने कहा, “यह अच्छा नहीं लगा कि न हमारी ईद मनी, न रक्षाबन्धन।”

चंदा (15 वर्ष) बोली, “दीदी, मुझे आपसे इतनी सारी बातें करनी हैं। आप लोगों से इतने दिनों से नहीं मिली, मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लग रहा था।”

बच्चों में तनाव के प्रमुख कारण

कुछ मामूली-से सवाल पूछते ही बच्चों के दिल का गुब्बार निकलने लगता। उनकी चिन्ताएँ, उनकी परेशानियाँ और उत्सुकताएँ उनके हावभाव से ही समझ में आ जाती थीं। इसके साथ यह भी देखा कि कई बच्चों में जिज्ञासा थी कि उन्हें कोविड के बारे में कुछ सही जानकारी मिल पाए। हमें बच्चों में तनाव के ये सब कारण महसूस हुए:

आर्थिक चुनौतियाँ

मज़दूर वर्ग रोज़ कमाकर खाता है; जब काम रुका तो घर में पैसे की कमी पहले दिन से ही महसूस हुई। बच्चों के लिए घरवालों से पैसे

माँगना, जो न्यूनतम खाने की आदत थी, वो भी बदल जाना तनाव का एक प्रमुख कारण बना। कोरोना के दौर में नौकरी छूट जाना, काम न मिलना जैसी समस्याओं से देश की आबादी का बड़ा हिस्सा जूझ रहा है, जिसमें वंचित तबके की स्थिति और अधिक दयनीय है। पुरुषों के अलावा बस्ती की काम करने वाली महिलाओं को भी काम नहीं मिल रहा है; जो बँगलों पर काम करने जाती थीं, अब उन्हें बुलाया नहीं जा रहा या कम वेतन में काम करने को बोला जा रहा है जिसका असर उन पर और उनके बच्चों पर भी दिखता है।

एक 10 वर्षीय बच्चे ने बताया, "हमें पक्का नहीं पता था कि शाम को खाना बाँटने आएँगे या नहीं, कल बाँटने आएँगे या नहीं, सो चिन्ता होती थी कि जो अभी मिला है, उसे पेटभर के खाएँ या रख लें।"

सोनिका (19 वर्ष) रेस्टोरेंट में काम करती थी, जहाँ उसे 6000 रुपए प्रतिमाह मिलता था। घर में भाई-बहनों को मिलाकर 7 सदस्य हैं। माँ बीनने जाती है और सोनिका और उसकी माँ के लाए हुए पैसों से ही घर चलता था। उसे सुबह 7:00 बजे से रात 8:00 बजे तक काम करना होता था। इन पैसों से वह घर चलाती थी और खुद का बवासीर और एनीमिया का इलाज भी करवाती थी। लॉकडाउन के बाद माँ का बीनने का काम बन्द हो गया और सोनिका को वही काम 4000 रुपए में करने के लिए बोला गया। इसलिए उसने यह काम छोड़ने का तय किया, क्योंकि इतने में न तो घर का खर्च चलता

और न इलाज के लिए पैसे पूरे हो पाते। फिर कोई काम नहीं मिला तो यही सोचती रही कि काम छोड़ना नहीं चाहिए था, और अपने पर गुस्सा भी आ रहा था।

गोपाल (11 वर्ष) ने लिखा, “हमारे घर राशन खत्म होने लगा था इसलिए एक दिन छोड़कर खाना बनता था। थोड़ा-थोड़ा इधर-उधर खा लेते थे, तो कभी बासी रोटी जो माँग कर लाते थे वही खाते थे, नमक-मिर्च के साथ। लॉकडाउन बढ़ने की खबर आती थी, तो अच्छा नहीं लगता था।”

एक और 10 वर्षीय बच्ची ने हमसे पूछा, “राशन बाँटने वाले आते थे, तो वो आधार कार्ड माँगते थे और उसे दिखाने पर ही राशन देते थे। वे ऐसा क्यों करते हैं?” वो बोल नहीं पाई कि इसमें क्या गड़बड़ है, लेकिन एहसास स्तर पर चुभता रहा।

कई बच्चों ने लिखा कि उन दिनों भूख भी बहुत लगती थी। इसके अलावा इस परिस्थिति में जहाँ सफाई से रहना बहुत महत्वपूर्ण है और नियमित रूप से हाथ धोने की बात की जाती है, कई लोगों के पास साबुन खरीदने तक के पैसे नहीं थे।

पढ़ाई पर खतरा

कोरोना महामारी के इस दौर में स्कूल, कॉलेज और सभी शिक्षण संस्थान बन्द हैं। इतने महीनों से बच्चे घर पर ही हैं। जो सक्षम हैं, अब उनकी ऑनलाइन पढ़ाई शुरू हो गई है लेकिन एक वंचित तबका जिनके पास खाने के लाले पड़े हैं, उनमें से बहुत ही सीमित लोगों के लिए

मोबाइल और इंटरनेट तक पहुँच बना पाना सम्भव है। ऐसे में बच्चों का बड़ा समूह पढ़ाई से छूटा चला जा रहा है। बच्चों और उनके माता-पिता को यह डर सता रहा है कि कहीं बच्चे जो पढ़ा हुआ है, उसे भी भूल न जाएँ। यह चिन्ता उनकी बातों में भी साफ झलकती है। कई बच्चे ऑनलाइन कक्षा के समय उदास बैठे होते हैं क्योंकि उनके पास या तो मोबाइल फोन नहीं होता या फोन में इंटरनेट की सुविधा के लिए डाटा नहीं होता।

ललिता (15 वर्ष) ने बताया कि उसके मम्मी-पापा, दोनों बेलदारी का काम करते थे, जिससे उनके घर का खर्च और उसकी दो बहनों और भाई की स्कूल की फीस भरते थे। कोरोना काल में उसके मम्मी-पापा को काम नहीं मिल रहा है, इस वजह से बहनों को प्राइवेट स्कूल से निकाल लिया गया। इस वजह से उसकी दोनों बहनें बहुत परेशान हैं और इस कारण ललिता को काम करने जाना पड़ रहा है।

दोस्तों से नहीं मिल पाना

दोस्तों से न मिल पाना सभी बच्चों के लिए परेशानी का एक सबब बना है और लड़कियों के लिए स्थिति और भी अधिक चिन्ताजनक है। जहाँ एक तरफ लड़कियाँ घर में रहते हुए घर की ज़िम्मेदारियों को निभाते हुए तनाव में हैं, वहीं दूसरी ओर उनका अपने दोस्तों से मिलना-जुलना भी नहीं हो पा रहा है।

रती (9 वर्ष) अपनी सहेलियों के साथ पढ़ना-लिखना, खेलना, बातें करना और हर बात साझा करना बहुत पसन्द करती है लेकिन कोविड के चलते वह अपने आप को बहुत अकेला महसूस कर रही है। यूँ तो भाई-बहनों के बीच नोंक-झोंक साधारण-सी बात है लेकिन तनाव के चलते यह छोटी नोंक-झोंक पार्वती को आत्महत्या के प्रयास तक ले गई जिसके कारण उसकी बड़ी बहन मेघा (13 वर्ष) और माँ भी बेहद तनाव में आ गईं।

18 वर्ष का एक युवक गर्लफ्रेंड से न मिल पाने के कारण तनाव में आ गया और उसने खुदखुशी कर ली, यह खबर एक बस्ती से पता चली।

अकेलापन

स्कूल नहीं जाने और घर में ही रहने के कारण मन में चल रही बातों को किसी से साझा नहीं कर पाना, तनाव को और भी बढ़ा रहा है। अभी लॉकडाउन खुलने के बाद यह और मुश्किल हुआ है क्योंकि माता-पिता काम की तलाश में और खाने के इन्तज़ाम में लगे रहते हैं, तब बच्चे अकेले रहते हैं जबकि लॉकडाउन के दौरान मम्मी-पापा पूरे समय बच्चों के साथ ही होते थे और उनका खयाल रख पाते थे।

कुछ बच्चे जिनके पास मोबाइल फोन हैं, इस अकेलेपन और बोरियत को दूर करने के लिए मोबाइल का सहारा लेते हैं, लेकिन जब मोबाइल नहीं मिल पाए, तो बहुत तनाव में आ जाते हैं।

कोविड का आतंक

माहौल में चारों तरफ कोरोना वायरस और टेस्टिंग टीम से डर के कारण बच्चों के मन में बेचैनी और चिन्ताएँ चल रही हैं। इसलिए देखने को मिला कि जब हम एक नई बस्ती में लाइब्रेरी के लिए पहली बार पहुँचे तो बच्चे किताबों के थैले को देखकर डर के कारण इधर-उधर छुपने लगे। बात करने पर पता चला कि बच्चे हमें कोविड टेस्ट करने वाला समझ रहे थे।

सुधा (9 वर्ष) ने बताया, "जब भी कोरोना वायरस चेक करने आते थे, तो हम लोग छुप जाते थे क्योंकि डर लगता था कि हमें पकड़कर ले जाएँगे और हमें अकेले वहाँ रहना पड़ेगा।"

राजा (17 वर्ष) कहता है कि खाना खा पा रहे हैं, लेकिन फिर भी चिन्ता के कारण दुबले हुए जा रहे हैं।

दुत्कार का एहसास

एक ओर जहाँ काम न मिलना परेशानी का कारण है, वहीं काम मिलने पर मालिकों का व्यवहार लोगों को बहुत परेशान कर रहा है। चंदन (16 वर्ष) कहता है कि बस्ती से लोग जब काम करने जाते हैं, तो उन्हें कुछ छूने नहीं दिया जाता और यदि कुछ छू लिया तो उसे धोना पड़ता है। पीने के लिए पानी तक नहीं दिया जाता है।

रोशनी (11 वर्ष) कहती है कि ये छुआछूत जैसी बीमारी है, सामने मल्टी में लौकी बेचने जाते हैं, तो लोग भगा देते हैं।

माँ-बाप के लिए चिन्ता

बच्चे परिवार में बड़ों के तनाव को भी महसूस कर रहे होते हैं, और इस छोटी उम्र में उनके दुःख को भी कम करने की पूरी कोशिश करते हैं। घरवालों को काम नहीं मिलना, घर में भरण-पोषण ठीक से नहीं कर पाने के कारण मायूसी, कुछ पालकों का शराब न मिलने पर सेनीटाइज़र पीने लगना, बारिश से होने वाली परेशानियों का माँ-बाप पर असर और इन तनावों के कारण हो रहे आपसी झगड़े, ये सभी कुछ बच्चों में उभरते तनाव के कारण बने हैं।

मंजना (13 वर्ष) ने लिखा, "सोना दीदी ने खाने के लिए सोने की बाली और नथ बेच दी, इस कारण उनके पति ने बच्चों के सामने तीन-चार दिनों में कई बार उनकी पिटाई की जिससे रिया और उसके भाई-बहन कई दिनों तक खुद भी रोते रहे।"

एक महिला ने बताया कि वो अपने बच्चों के साथ अपनी मालकिन के घर पैसे माँगने गई थी। जब मालकिन

ने उन्हें गेट से अन्दर नहीं आने दिया तो बच्ची ही रोती हुई माँ का हाथ पकड़कर उसे वापस ले आई।

घर की बाहर पर निर्भरता

बस्ती में रह रहे लोगों को अपनी छोटी-छोटी ज़रूरतों जैसे खाना बनाने के लिए लकड़ी लाना, पानी भरने के लिए थोड़े दूर तक जाना, बकरियों को चराने जाना और उनके लिए चारा लाना आदि के लिए बाहर निकलना ही पड़ता है। लेकिन लॉकडाउन की सख्ती के चलते लोग बाहर नहीं निकल पा रहे थे - डर रहे थे कि बाहर निकलने पर पुलिस तंग करेगी। इन उदाहरणों से उनकी परेशानियों को समझा जा सकता है।

संजय (10 वर्ष) ने लिखा, "पानी के लिए बहुत परेशान होना पड़ता था। पानी भरने जाते थे तो पुलिसवाले रोकते थे, मास्क लगाने को कहते थे। हमारे यहाँ एक दिन छोड़कर टैंकर आता था और सबको ठीक से पानी भी नहीं मिलता था।"

जहाँ एक बच्चे ने बताया कि "बकरियों को चराने नहीं जा पा रहे थे और उनके लिए चारा भी नहीं ला पा रहे थे तो बकरियाँ कमज़ोर होने लगीं थी, हमें बहुत बुरा लगता था," वहीं दूसरी तरफ एक बच्चे का गुस्सा था कि "लकड़ी लेने जाओ तो पुलिसवाले भगाते हैं। खाना कैसे बनाएँ? क्या वो जानते नहीं हैं कि हमारे घर में गैस नहीं है?"

"लॉकडाउन में जब पुलिसवाले चौराहों पर खड़े रहते थे तो लोग कहीं नहीं जा पा रहे थे। जो बिना मास्क के गाड़ी चला रहे थे, उन्हें बहुत मार रहे थे, मुझे भी मारा।" योगेश (15 वर्ष)

दुनिया की खबरों का प्रभाव

कोविड कहाँ कैसे फैल रहा है, कौन-से देश में क्या हो रहा है, ऐसी सब खबरें सब तरफ से बच्चों को प्रभावित कर रहीं थीं। यह देखने को मिला कि सभी बच्चों को अपने से दूर रह रहे लोगों के लिए भी चिन्ता थी। सुहानी को पता चला कि नागपुर में रह रहे उनके रिश्तेदार के घर में चोरी हो गई और अब उनके पास बिलकुल भी पैसे नहीं बचे इसलिए उसकी दादी ने कुछ पैसे उनके लिए भेजे हैं।

"हमारे मोहल्ले में राशन बाँटने तो आते थे, लेकिन कहीं तो मज़दूरों को खाना भी नहीं मिला। ट्रेन भी नहीं चल रही थीं।" इकरा (13 वर्ष)

इस पूरी प्रक्रिया से हमें इस दौर के बारे में जो समझ आया:

- बच्चों के पास बहुत सारे सवाल थे लेकिन जवाब देने के लिए लोग नहीं थे। इसलिए कभी-कभी वे हमें लिखते थे या वापस मिलकर भी सवाल पूछते रहते थे।
- बस्तियों में बच्चे खेल ज़रूर पा रहे थे, लेकिन आज़ाद महसूस नहीं कर रहे थे; जबकि कॉलोनियों में तो बच्चे घरों से बाहर भी नहीं निकल पा रहे थे तो वे भी अवश्य तनाव में रहे होंगे।
- बच्चे स्कूल को बहुत याद कर रहे हैं।
- लड़कियों की आज़ादी पर और ज़्यादा पाबन्दी लग गई - लड़कियों का कामकाज नहीं रुका, काम में और भी ज़्यादा वक्त जाने लगा और जो थोड़ा स्कूल जाती थीं, वो भी रुक गया। तैयार होना, सड़क तक जाना, सब रुक गया।
- घरों में एक तरफ झगड़ा बढ़ा है क्योंकि पैसे नहीं थे, लेकिन घरों के अन्दर स्थिति थोड़ी बेहतर भी थी क्योंकि दारू की दुकानें बन्द थीं।
- अपनी परेशानियों के अलावा बच्चे अन्य लोगों की भी परेशानियों को देख रहे थे, सुन रहे थे और महसूस भी कर रहे थे।

बच्चों की जो स्थिति है तथा वे जिस कशमकश से गुज़र रहे हैं, इससे निकलने के लिए उनसे लगातार बात करते रहना और उनके घरों के आसपास कुछ गतिविधियाँ होते रहना बहुत ज़रूरी हैं। हमारी इस पहल से समझ आया कि यह भूमिका बहुत-से लोग निभा सकते हैं, चाहे वे घरवाले हों या अच्छे दोस्त या एक शिक्षक या बस्ती के कोई और वयस्क हों, ताकि बच्चे अपने मन की बात एवं अपने तनाव को साझा कर पाएँ।

शशिकला नारनवरे, गुलाबचंद शैलू, सुषमा लोधी: *मुस्कान* संस्था, भोपाल के शिक्षा समूह से सम्बद्ध हैं।

सभी फोटो: *मुस्कान* संस्था की लाइब्रेरी।

अप्रवासी

जेर्राड वीलन

वे तो फकत दुनिया की खूबसूरती निहारने के लिए रुके थे, लेकिन तभी ऍलन ने अफ्रीका का एक छोटा-सा चुग्गा गटक लिया और वह अभी अमेरिका को चुगने वाला ही था कि मिसेज़ मार्ली आ धमकीं और वे लोग धर लिए गए। डैड, जो अब तक ऍलन के निवाले न देखने का स्वांग कर रहे थे, अचानक से अपने बच्चों को आँखें तरेर देखने लगे। मिसेज़ मार्ली रुँधी हुई आवाज़ में बोलीं। "बेचारे गरीब लोग!" वह बोलीं। "छोड़ो भी गरीब बेचारों को!"

वह बड़ा गोल-गोल केक खूबसूरत था। सैली ऍन को लगा कि इतना खूबसूरत केक भला खाएँ तो खाएँ कैसे। उसे रंग-बिरंगी आइसिंग से कुछ इस तरह सजाया गया था कि वह हूबहू पृथ्वी ही लग रहा था। मिसेज़ मार्ली ने घण्टों लगाए थे, उस पर एक स्कूल ऍटलस उकेरने के लिए और तिस पर सब महाद्वीपों की शक्ल एकदम सही से बनी थी।

"हम निश्चित रूप से यह नहीं जानते कि ये लोग कहाँ के हैं," उन्होंने समझाया। "इसके बावजूद,

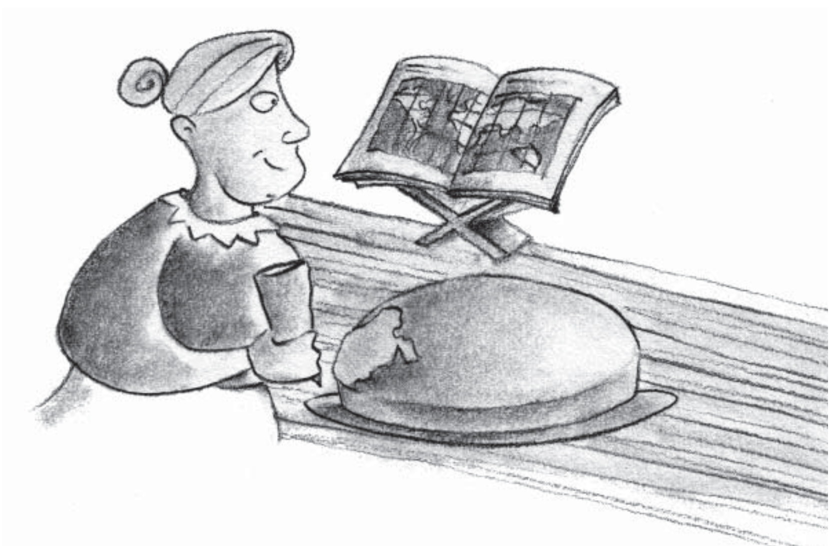

हमसे कहीं ज़्यादा अच्छे से वे दुनिया का हाल समझ पाएँगे। हम नहीं चाहते कि उन्हें हम जाहिल लगें। वे अपमानित महसूस कर सकते हैं।"

यह सच था। सैली ऍन के पापा सहमत हुए। निन्दाएँ इतनी महत्वपूर्ण होती हैं कि वे यूँ ही ज़ाया नहीं की जा सकतीं - अगर आप किसी की बुराई करना चाहते हैं तो आपको वह सोद्देश्य ही करना चाहिए। निस्सन्देह मिसेज़ मार्ली ऐसा नहीं सोचती थीं - उन्हें लोगों को नाराज़ करना बिलकुल नहीं भाता था। वे बहुत प्यारी महिला थीं। केक पर सब महाद्वीपों की शक्ल एकदम सही-सही उकेरने में उन्होंने जो समय लगाया था, वह उनकी खासियत थी - लोग कहते, कोई भी जानकारी मिसेज़ मार्ली के लिए छोटी-मोटी नहीं थी। केक बनाने को उन्होंने एक कला का रूप दिया था।

"अमेरिका टेस्टी लग रहा है," ऍलन बोला। "वो आइसिंग बादाम की है या सादी?"

इस तरह से मिसेज़ मार्ली का ध्यान भटकाने की कोशिश नाकाम रही। मीठे को लेकर ऍलन के चस्के को वे खूब जानती थीं। वे आईं और फ्लोरिडा को ध्यान से देखने लगीं। वह अब, तब के मुकाबले थोड़ा कमतर दीख रहा था जब वह उनके किचन से बाहर लाया गया था।

"अरे तुमने मायामी खा लिया," उन्होंने शिकायती लहज़े में ऍलन से कहा। लेकिन ऍलन भी कम खुदा न था, पैदाइशी झूठा जो ठहरा। अपने समूचे पर आहत भोलेपन में उसने अपने पर लगे इस इल्ज़ाम से इन्कार किया।

"तुम जानते हो ऍलन," पापा ने प्रशंसा भाव से कहा, "एक दिन तुम एक पहुँचे हुए राजनेता बन सकते हो।"

यह जानते हुए कि राजनेताओं को लेकर उसके डैड क्या सोचते हैं, ऍलन टकटकी लगाकर उन्हें घूरने लगा। तिस पर, उसके डैड ने उसे समझाया। "शॉन मॉर्गन को देखो," वे बोले। "जब हम स्कूल में साथ पढ़ते थे तब वह हर आसान सवाल का गलत जवाब देता और सब मानने लगे कि वह मूर्ख है। लेकिन फिर जब वह राजनीति में गया तब हमने जाना कि चाहे जो हो, बस वह सच नहीं बोल सकता था। एक ऐसा जन्मजात असत्यवादी जो पला ही ऐसे था जैसे सबकुछ उसी का हो। और देखो, कितना कामयाब है वह!"

***

शरणार्थियों का स्वागत करने वाली समिति ने 'अनुदार भवन (परोकिअल हॉल)' में एक बड़ी पार्टी आयोजित की थी, और नवागन्तुकों के लिए रखे गए उस विशाल भोज में वह विश्व-केक आकर्षण का केन्द्रबिन्दु रहने वाला था। किसी को न पता था

कि अजनबी लोग क्या खाते हैं, सो ऐन कौन-सा खाना परोसा जाए, इस बात को लेकर कुछ चिन्ता थी।

“केक्स!” मिसेज़ मार्ली तपाक-से बोली थीं, मानो यह बात तो एकदम साफ थी। “बहुत सारे केक! केक सबको भाते हैं, यह बात पक्की है!”

“अच्छे तो लगते हैं, मिसेज़ मार्ली,” सैली ऍन के डैड बोले। “लेकिन कभी-कभार, वे उसके साथ कुछ और भी खाना चाहते हैं - एक बदलाव के बतौर।”

मिसेज़ मार्ली के लिए केक हर चीज़ का समाधान थे; डैड कभी-कभार तुनक जाते जब केक-पेस्ट्री को लेकर उस बुढ़िया की सनक उन्हें खिजाने लगती। लेकिन ऍलन को तो उस आइडिया में कोई खराबी न दिखी, बल्कि मम्मी - जो कि मिसेज़ मार्ली को पसन्द करती थीं - भी उन्हीं का पक्ष लेतीं।

“हो सकता है केक ही हर चीज़ के समाधान हों,” मम्मी कहतीं। “आपने कभी सोचा है इस बारे में? कुछ लोग जैसे जवाब देते हैं, उनकी तुलना में तो यह समाधान बिलकुल भी बेहूदा नहीं।”

“जैसे कि?” डैड ने भी अदेर ही अपना सवाल जड़ दिया।

मम्मी को चैलेंज करना कतई खतरे से खाली न था। और लो वे शुरू हो गईं अपनी उंगलियों पर हर बात को लेकर कुछेक लोगों के जवाबों को दर्ज करने।

“युद्ध,” वे बोलीं। “हत्या। जेल। फाँसी...”

तुरन्त ही डैड को सम्पट पड़ी कि वे भी भला किससे उलझ रहे हैं, सो उन्होंने मरता क्या न करता की मुद्रा में अपना हाथ उठा मम्मी को चुप कराने की कोशिश की। “तुम बिलकुल ठीक कह रही हो,” वे बोले। “मैं केक्स ले लूँगा।”

“मैं भी,” ऍलन भी बीच में टपक पड़ा। “एक जैम डोनट प्लीज़, और एक ऍक्लेअर।”

ठण्डी साँस ले डैड बोले, “तुम्हें पता है कि हम टीचर लोग खुद अपने ही बच्चों के साथ विफल होते हैं?”

“यहाँ तक आते-आते मुझे इसका काफी कुछ अन्दाज़ा हो गया था।”

***

एक तरह से तो, भोज में परोसी जाने वाली चीज़ों का कोई मतलब ही नहीं था। चीज़ें क्या, बुफे पार्टी ही अपने आप में महत्वपूर्ण थी - कुल जमा लब्बोलुआब यह था कि उस जगह को उन तमाम चीज़ों से भर दो जिन्हें स्थानीय लोग ‘अच्छी चीज़ें’ मानते हैं, और फिर तमाम इन चीज़ों को उन बदकिस्मत अजनबियों के सामने परोसो जो उनके बीच आ धमके थे। नवागन्तुकों के लिए सोचा-समझा सन्देश था, “देखो, यह हमारा पोषण है। ये सब व्यंजन हमें अच्छे लगते हैं, और हमने ये खास तौर पर

आपके लिए बनाए हैं, और ये सब हम आपको प्रचुर मात्रा में देकर हमारे देश में आपका स्वागत कर रहे हैं।” लेकिन हम उन्हें खराब चीज़ें परोसें, यह गवारा न था। सैली ऍन के पापा ने बताया कि जिस मीटिंग में यह तय होना था कि पार्टी में रखी जाने वाली ‘अच्छी चीज़ें’ असल में क्या होंगी, उस मीटिंग में बड़ा मज़ा आया। शराब और सूअर की उबली टांगों को तो तुरन्त बाहर रख दिया गया। दरअसल, परदेसियों के ज़ायके के बारे में जानकारी न होने के चलते, समिति अन्ततः इस नतीजे पर पहुँची कि सिर्फ वही आइटम रखे जाएँ जो तकरीबन हरेक को पसन्द आते हैं – मसलन केक और बिस्किट्स, जैसा कि मिसेज़ मार्ली का कहना था। हाँ, दूसरी चीज़ें भी रहेंगीं ज़रूर – किस्म-किस्म का भुना मांस, और शाकाहारियों के लिए सब्ज़ियाँ, आइसक्रीम और चॉकलेटें, चाय और कॉफी, दूध और शिकंजी आदि-आदि। इस निर्णय तक पहुँचने में समिति को चार घण्टे से भी ज़्यादा का समय लग गया, इसके बावजूद समिति के एक-ठो अति-उत्साही सदस्य इस मसले पर अभी और बातचीत करना चाहते थे।

तिस पर, सैली ऍन के डैड उनसे बोले थे, “ठीक है, और अगर वे नहीं खाते तो हम जीम लेंगे। काश, वे सारे व्यंजन अभी इस वक्त यहाँ होते – उनकी बातें करते-करते मुझे तो भूख लगने लगी है।”

वाकई, जब वे घर लौटे तो इस कदर भूखे थे कि सैली ऍन की माँ ने उनके लिए चिप्स तल दीं, और यही नहीं, उनने ऍलन की चिकन स्क्विगल्स की आपातकालीन रसद

तक डकार ली। लेकिन ऍलन ने भी बुरा न माना, क्योंकि यह सब किसी अच्छे मकसद के लिए हो रहा था। इसके पहले डैड ने कभी चिकन स्क्विगिल्स तो खाए ही नहीं थे, सो पहली बार खाने से पहले उन्होंने काँटे को थामे रखा और उसे घूरते रहे ध्यान से। इसके बाद फ्रीज़र से उसका पैकेट निकाल वे उस पर छपी सामग्री सूची को गौर से पढ़ने लगे।

"हे भगवान," तिस पर तनिक हैरान-से ध्वनित हो वे बोले। "कितनी हैरत की बात है कि हम अपने बच्चों को यह सब कचरा खिलाते हैं।"

लेकिन फिर भी वे न सिर्फ माँ द्वारा बनाए गए सारे स्क्विगल्स भकोस गए, और तिस पर कुछ-कुछ निराश भी दिखे कि अब वे और नहीं बचे थे।

***

बेशक, सब लोगों को बाहर वालों के वहाँ आने की बात अच्छी नहीं लग रही थी। वह शहर बड़ा तो नहीं था, लेकिन वह इन्सानों की नगरी थी, और जहाँ भी इन्सान होंगे, वहाँ शंकालु मन भी होंगे और स्वागत करने वाले भी। कुछ लोग बाहर निकल, नई चीज़ों का स्वागत करते हैं; जबकि बाकी घर-घुस्सू हो जाते हैं, क्योंकि अपनी सिकुड़ी-सिमटी दुनिया में वे ज़रा भी बदलाव नहीं देखना चाहते। अजनबियों को

लेकर अनेक प्रकार की बुरी-भली कानाफूसियाँ भी हुईं। आखिर यहाँ आ धमकने और नगर के वैसे भी सीमित संसाधनों का उपयोग करने का हक उन्हें भला किसने दिया था। क्या कोई जानता है उनकी अजीबोगरीब आदतों के बारे में, या फिर कौन-सी धूल-गर्दी और बीमारियाँ वे अपने साथ यहाँ ला सकते हैं? कुछ का कहना था कि वे तो बस यहाँ मुफ्तखोरी करने के लिए आ रहे हैं। कुछ का कहना था कि उनमें शामिल ज़्यादातर लोग तो ऐसे हैं जो अपने यहाँ अपराधी रहे आए हैं – ऐसे लोग जिन्होंने पुलिस की नाक में दम कर रखा है, और जो अपने साथ यहाँ भी अपराधों की झड़ी लेकर आएँगे। सैली ऍन के डैड के मुताबिक, उन सब शिकायतों का निचोड़ बस यह था कि वे अजनबी लोग, हमसे अलग लोग हैं।

और वे भला अलग क्यों न होंगे? वे जानना चाहते थे। "वे एकदम नई दुनिया में आ रहे हैं। और हममें भला कौन सुरखाब के पर लगे हैं कि हम जैसा न होना गुनाह हो गया?"

सैली ऍन के पापा स्थानीय सेकण्डरी स्कूल में पढ़ाते थे, और अपनी युवावस्था में उन्होंने बहुत यात्राएँ की थीं। उनके पास उन अफवाहों और इस समय उनके घर-नगर पधारे शरणार्थियों की नुक्ताचीनी के लिए बिलकुल समय न था। आम तौर पर तो वे इस बड़बड़ाहट को हँसी में उड़ा देते, पर हमेशा नहीं। वास्तव में, यह प्रसंग उन थोड़े प्रसंगों में आता था जब उनके बच्चों ने उनका पारा चढ़ते हुए देखा था, और निश्चय ही दोनों ने अपने-अपने ढंग से इसके लिए उन्हें सराहा भी था।

"इन बेचारे बदकिस्मतों को वही सारी गालियाँ दी जा रहीं थीं, जो कभी खुद आइरिशों को दी गईं थीं," वे कहते। "यह देश चाहे जिसने चलाया हो, हमने अपने गरीबों और भूखों को यहाँ-वहाँ, चाहे जहाँ-जहाँ बाहर भेजा है, और फिर हमने उनके हाल बेहाल की परवाह किए बिना, उन्हें बहिष्कृत किया है। अपनी गन्दगी और बीमारियों से लदा, अपने अजीब खान-पान और अपनी अजीबोगरीब आदतों वाला बदमाश आइरिश - जानते हो, मेरे समय के इंग्लैंड और अमेरिका तक में मैं यही सारी बातें सुना करता था। और अब यहाँ, कुछ जड़-उखड़े बदकिस्मत हमसे किंचित उस करुणा की गुहार लगा रहे हैं, जो उन दूसरी जगहों ने हमारे इन लोगों को दिखाई, और उधर हममें से ही कोई है जो वही घिसी-पिटी, फालतू बकवास किए जा रहा है जो कभी हम पर ही बरसा करती थी।"

सैली ऍन को फख्र महसूस होता जब भी वे ऐसी बातें किया करते। यहाँ तक कि ऍलन भी - जो यह सोचता कि उसे इस उम्र में किसी भी बात से प्रभावित नहीं होना है (केक की बात अलग है) – यह बात मानता था कि अपने इस रंग में उनके पिता

प्राय: प्रभावशाली होते हैं। सैली ऍन का खयाल था कि 'प्रभावशाली' से ऍलन का आशय था कि उनके पिता 'साहसी' थे। ऍलन उससे दो बरस बड़ा था, पर सैली ऍन को अब यह लगने लगा था कि वयस्क होने में लड़कों की रफ्तार ज़रा कम होती है – हालाँकि हो सकता है ऐसा सिर्फ ऍलन के साथ हो।

उसने अपनी माँ से पूछा, "क्या मानव नर में मस्तिष्क का विकास सबसे आखिर में होता है?"

"मैं नहीं जानती," माँ बोलीं। "मैं तो तुम्हारे पिता का दिमाग विकसित होने का इन्तज़ार करूँगी, और जब वह विकसित हो जाएगा, मैं तुम्हें बताऊँगी।"

"थैंक्स, मम्मी," सैली ऍन बोली। कभी-कभी माँएँ काम आ जातीं हैं।

शरणार्थी-विरोधी मण्डली के खिलाफ डैड अपनी भड़ास केवल निजी स्तर पर ही नहीं निकाला करते थे। बल्कि जब भी वे किसी को शरणार्थियों की बुराई करते हुए सुन लेते, वे उनसे इस बारे में बात करते, और वे उनसे गुस्सा भी हो लेते थे – उससे भी ज़्यादा गुस्सा जितना वे अपने बच्चों के सामने करते। एक बार, सैली ऍन को पता चला कि वे तो बस उस गैराज मालिक, मैट मार्टिन से हॉर्सशू हॉटेल के लाउंज बार में भिड़ ही गए थे, समझो। मैट तो एक तरह से शरणार्थी-विरोधी मण्डली का स्वयम्भू प्रवक्ता बन गया था, यह सोच कि ऐसा करना शायद उसके किसी काम आए। लेकिन मैट मार्टिन धूर्त था, और इतना चालाक तो था कि खुद अपनी जितनी कद-काठी के आदमी से तो भिड़ पड़ता, लेकिन सैली ऍन के डैड तो अच्छे-खासे लहीम-शहीम थे, सो मैट ने मैदान छोड़ दिया। सैली ऍन को जब यह बात पता चली तो वह फख्र से फूली न समायी। अधिकांश समझदार लोगों की तरह उसे भी मैट मार्टिन रत्ती भर पसन्द न था। लोग कहते कि उसके सबसे अच्छे दोस्त भी मैट को पसन्द न करते थे। वह कुछ ज़्यादा ही चिकना-चुपड़ा और घुन्ना आदमी था। इस वाकये ने ऍलन को भी प्रभावित किया था – किसी कारण, उसकी एक चाह यह भी रही कि कोई तो हो जो मैट मार्टिन का जबड़ा तोड़ दे।

इस समूचे शरणार्थी मसले ने स्थानीय राजनेता, शॉन मॉर्गन को एक उलझन में डाल दिया था। जिस राजनैतिक दल से वह जुड़ा था, उसकी सरकार थी और उसने तय किया था कि अप्रवासियों को आकर नगर में बसना चाहिए। असल में तो, सरकार यह चाहती ही नहीं थी कि यह निर्णय उसे लेना पड़े, लेकिन यह एक विशेष प्रकरण था – अमरीकियों ने इस मामले में खास दिलचस्पी ली थी, और इसीलिए आइरिश सत्ताधारियों ने अप्रवासियों को अपने

यहाँ शरण देने का निर्णय लिया था। अब खास तौर पर इस छोटे-से कस्बे को ही क्यों चुना गया था, इसके बारे में कोई नहीं जानता था। इस समाचार की घोषणा के कुछ दिनों बाद ही, सरकार ने घोषणा की कि एक बड़ी अमरीकी कम्पनी इस नगर में अपनी एक अनुसंधान संस्था स्थापित करना चाहती है, और उसके चलते वहाँ के लोगों को इतनी ज़्यादा नौकरियाँ मिलेंगी जितनी कि अब तक के समूचे इतिहास में वहाँ के लोगों को नहीं मिलीं थीं। सरकार को अगर इस बात की आशा रही होगी कि यह खबर सुन शिकायतगर खुश हो जाएँगे, तो उसे निराशा ही हाथ लगी।

"यह तो खालिस रिश्वतखोरी है," मैट मार्टिन ने अकेले में शॉन मॉर्गन से कहा। "बेशक रिश्वतखोरी के खिलाफ मेरी कोई शिकायत नहीं, लेकिन ऐसा शायद नहीं होगा।"

***

लेकिन शरणार्थियों के आने का दिन नज़दीक आते आते ऐसा लगने लगा था कि कुछ-न-कुछ होकर रहेगा। सुवेशी अजनबियों के झुण्ड-के-झुण्ड नज़र आने लगे, और 'अनुदार भवन (परोकिअल हॉल)' में सार्वजनिक सभाएँ होने लगीं जिनमें स्थानीय लोगों को शिक्षित किया जाता कि उनके बीच जल्द पधारने वाले नवागन्तुकों से वे किस तरह पेश आएँगे। ऐसी पहली सभा की घोषणा के वक्त हॉर्सशू हॉटेल के बार में मैट मार्टिन इसे लेकर खूब तुनक में था।

"वे हमें शिक्षित करना चाहते हैं!" वह झल्लाया। "हमें पट्टी पढ़ाने के लिए वे लोग शहर से कुछ दबंगियों को यहाँ भेजना चाहते हैं! तो मेरी बात अच्छे से सुन लो – मैट मार्टिन को तो वे न पढ़ा पाएँगे!"

तिस पर सैली ऍन की माँ बोलीं, "इससे ज़्यादा सच्ची बात उसने कभी न कही होगी। सब्बल के बल पर भी प्रोफेसर-सेना इस बन्द दिमाग के अन्दर तालीम न घुसेड़ सकी।"

वे सार्वजनिक सभाएँ भी अजीब कारोबार थीं। शुरुआत से ही उनमें काफी भीड़ रही, खास तौर पर बुज़ुर्ग महिलाओं की – बिंगो हॉल तो महीनों पहले जलकर भस्म हो गया था, सो वे खुश थीं कि गर्मी की इन लम्बी शामों में अड्डेबाज़ी करने की कोई-ठो जगह तो है उनके पास। उधर शिक्षक जो थे वे सब-के-सब सूट-बूट पहने ऐसे युवा थे जिन्होंने कभी मुस्कुराना न छोड़ा था और जो निहायत बेवकूफाना बातें करते थे, लेकिन उन बुढ़ियाओं को इससे कोई उज्र न था। उन्हें तो अच्छी-खासी आदत थी तमाम लोगों की बकवास सुनने की, बल्कि उनमें से ज़्यादातर ने तो उन सुवेशित नौजवानों की तारीफ ही की।

"मैंने तो कभी इतने साफ-सुथरे लोग न देखे थे," मिसेज़ मार्ली ने

कहा। “अरे उनके तो जूतों तक से उठाकर खाना खाया जा सकता था।”

“अगर आप ऐसी होतीं तो,” सैली ऍन के डैड बोले। उन्हें ये शिक्षाप्रद बैठकें खास तौर पर पसन्द न थीं क्योंकि उनके अनुसार एक ऐसे व्यक्ति के नाते जिसे अपनी आजीविका के लिए दिन भर बकवास करना पड़ी हो, उनके लिए तो शाम के वक्त इस तरह की बकवास सुनना उनका सबसे आखिरी विकल्प होता। और सचमुच, थोड़े ही सत्रों बाद, कमोबेश हर कोई उनसे ऊबने लगा था। यह तो साफ था कि उन नौजवानों को भी नवागन्तुकों के बारे में किसी और के मुकाबले कुछ ज़्यादा मालूम न था, और वे तो बस कुछ आँयबाँय ही बके जा रहे थे। सिर्फ 96 बरस की बुज़ुर्ग मिसेज़ कूम्ब्स ही इस बड़बड़ से बेपरवाह नज़र आईं, शायद इसलिए कि वे एक खम्भे जितनी बहरी थीं। लेकिन मिसेज़ कूम्ब्स को भी उन नौजवानों की अविराम मुस्कुराहटों से परेशानी तो हुई ही।

“कोई भी इतना खुश नहीं हो सकता जब तक कि वह नाकारा न हो,” वे अपनी निकटतम पड़ोसन मिसेज़ मार्ली से बहुत ऊँची आवाज़ में कहतीं। “यह सामान्य नहीं है!”

“हो सकता है, यहाँ न हो, मैरी एलेन,” मिसेज़ मार्ली कहतीं। “हो सकता है शहर में यह स्वाभाविक हो!”

और जैसा कि वे उनसे कही गई हर बात का जवाब हर किसी को हर दम देती थीं, श्रीमती कूम्ब्स जवाब देतीं, “क्या बोली तुम? ज़रा-ज़ोर-से बोलो! तुम तो जानती ही हो कि मैं निपट बहरी हूँ।”

“मैं कैसे न जानूँगी, मैरी एलेन?” मिसेज़ मार्ली सब्र से बोलीं। “पिछले पच्चीस सालों से तुम हर दिन कम-से-कम दस दफे तो यह बात मुझे बताती रही हो।”

यह बात पूरी तरह से सच थी। हालाँकि, ऐसे लोग थे जिन्हें श्रीमती कूम्ब्स की इस छोटी-सी अक्षमता की भनक न थी - वे अपने वे नकली दाँत केवल खास मौकों पर ही लगाया करती थीं, जिनके बिना उनकी बातें समझ पाना कठिन था।

“तुम क्या बोलीं?” अब मिसेज़ कूम्ब्स बोलीं, “ज़ोर-से बोलो!”

***

तिस पर, अच्छा या बुरा, वो महान दिन अन्ततः आ ही गया, लग रहा था गोया सारा शहर उमड़ पड़ा हो चौक पर, शरणार्थियों को आते हुए देखने। उधर ‘अनुदार भवन’ में लम्बी-लम्बी टेबलें भोजन के ढेर वाली परातों और मदिरा भरे पात्रों के बोझ तले धँसी जा रही थीं, और मिसेज़ मार्ली गृहिणी मण्डली की स्थानीय शाखा की स्त्रियों पर नज़र रखे हुए थीं क्योंकि वे छोटी-छोटी चीज़ों से कुछ ज़्यादा ही छेड़-छाड़ कर रही थीं। डैड, मम्मी

और अच्छी जगह की तलाश में निकल लिए, भीड़ पहले से ही बाहर चौक पर जमा होने लगी थी। सैली ऍन और ऍलन ने देखा कि मिसेज़ मार्ली विश्व-केक को गर्व से उठाए हुए बाहर ले आईं और उन्होंने उसे मुख्य टेबल पर 'गौरव के स्थान' पर रख दिया। ऍलन वहाँ रखे भोजन को ललचाई नज़रों से देखने लगा, तभी सैली ऍन ने अपनी कोहनी उसकी पसलियों में गड़ा दी।

"रुको!" वह बोली। "यहाँ तुम्हारी लार टपक रही है। वहाँ तुम्हें कुछ न मिलेगा – वे बुढ़ियाएँ बाज़ की मानिन्द निगहबानी कर रहीं हैं।"

ऍलन एक साइड टेबल पर कब्ज़ा जमाए हुए भूरे रंग के एक विशाल पिण्ड को देख रहा था।

"यह भला कौन चीज़ है?"

"मुझे लगता है," सैली ऍन बोली, "किसी किस्म की गाय रही होगी, अपने पिछले जन्म में।"

ऍलन हॉल में रखे तमाम प्रकार के खाद्य पदार्थों को देख हैरान हो गया था। मिसेज़ मार्ली और उनके सहायकों ने खूब जमकर मेहनत की थी। लेकिन अन्ततः, ऍलन को भी मानना पड़ा कि उन शिकारी-आँखों वाली महिलाओं को लेकर सैली ऍन का नज़रिया सही था; तय समय से पहले एक मक्खी भी उस खाने तक नहीं पहुँच सकती थी। वे बाहर टपराने लगे, यह देखने के लिए कि कहीं कुछ हलचल हो रही है क्या। भीड़ में से दबी-दबी बातचीत की भनभनाहट आ रही थी, जो उन लोगों के हॉल में दाखिल होते ही एकदम तेज़ी-से बढ़ने लगी थी। चौक के एक सिरे पर एक मंच तैनात किया गया था, और उस पर शॉन मॉर्गन पूरी शान के साथ लाल रंग की प्लास्टिक की कुर्सी पर बिराजा हुआ था जबकि स्थानीय परिषद के सदस्य इस बात पर झगड़ रहे थे कि बची हुई कुर्सियों में से कौन किस कुर्सी पर बैठेगा। कुछ सीटें कुछ वरिष्ठ अमरीकियों के लिए आरक्षित थीं, पर वे अभी आए नहीं थे। चमचमाते जूते पहने उन सूटबूटधारी युवकों में से एक भी बन्दा वहाँ नहीं दिख रहा था। कुछ सुरक्षाकर्मी टाइप के बन्दे अपने रूटीनी अन्दाज़ में भीड़ के साथ घुलमिल रहे थे और अपने काले रंग के पहरावे में अपनी साँप सरीखी खतरनाक मुखमुद्रा ताने स्थानीय लोगों में शामिल होने की नाकाम कोशिश कर रहे थे।

तभी मैदान के अन्दर एक लम्बी काली लिमोज़ीन चलकर आई, और वहाँ चल रहे आशाओं के कलरव को शाँत किया। मंच के सामने आ वह खड़ी हुई और उसमें से तीन सूटबूटधारी पुरुष बाहर निकले। लोगों की फुसफुसाहट तिस पर फिर से शुरू हो गई जब उन्होंने उनमें से एक को सरकार के नेता और दूसरे को रक्षा मंत्री के बतौर पहचाना। तीसरा

जो था, बुज़ुर्ग था और इतना गरिमापूर्ण लग रहा था कि वह कोई राजनेता नहीं हो सकता था। किसी ने उसे पहचान लिया और फिर भीड़ में यह जिज्ञासु कानाफूसी फैली कि वह आयरलैंड में नियुक्त अमेरिकी राजदूत था। वे तीनों सीढ़ियाँ चढ़ मंच तक पहुँचे जहाँ वास्तव में महत्वपूर्ण किसी शख्सियत की उपस्थिति में हतप्रभ दीख रहा शॉन मॉर्गन झट-से अपनी बीच वाली कुर्सी छोड़ने के उपक्रम में था।

अब तक सैली ऍन ने अपने माता-पिता को उस भीड़ में सामने की ओर देख लिया था और वह उनके पास चली गई। उधर ऍलन अपने दोस्तों की तलाश में चल दिया था। "क्या वे सही में अमेरिकी राजदूत हैं?" सैली ऍन ने अपने पिता से पूछा। "लगता तो है," पिता बोले।

"तुम्हारा शैतान भाई कहाँ है?" माँ ने पूछा। "कहीं होगा अपने शैतान दोस्तों के साथ शैतानी करने," सैली ऍन बोली।

और ज़्यादा काली कारें आईं, जिनमें और ज़्यादा गणमान्य सवार थे। तभी सैली ऍन की नज़र भीड़ में मौजूद आइसक्रीम खाते मैट मार्टिन पर पड़ी। अब चूँकि वो महान दिन सचमुच आ गया था, वह भी औरों की तरह जोश से भरपूर लग रहा था। इतने में अपने चमकीले वाद्यों के साथ स्थानीय सिल्वर बैंड आया, और सीधे जाकर मंच के सामने बनी जगह पर खड़ा हो गया। मंच पर कुर्सियों के टोटे के चलते कुछेक पार्षदों के बीच भगदड़-सी मची हुई थी। सैली ऍन ने अपनी घड़ी देखी। बारह बजने में पाँच मिनट बाकी थे – नवागन्तुकों के आगमन में अब पाँच मिनट बाकी थे। "कुछ भी हो, वे महत्वपूर्ण तो अवश्य हैं," उसकी माँ ने कहा। "सही है,"

उसके पिता बोले। "ये बड़भैये यूँ किसी भी ऐरे-गैरे नत्थू-खैरे के लिए नहीं चले आते।"

***

दिन तो सूखा था, पर आकाश में बादल थे। कुछ बादल तो सीधे-सीधे सिर पर आकर जमा हो गए लगते थे, गोया वे भी नवागन्तुकों को वहाँ आते हुए देखना चाहते थे। ज्यों-ज्यों घड़ियाँ बीत रही थीं, भीड़ शान्त होती जा रही थी, यहाँ तक कि नन्हे मुन्ने बच्चे भी। तनाव बढ़ता जा रहा था, और बारह बजने के ठीक दो मिनट पहले सैली ऍन ने अचानक महसूस किया जैसे वह श्वासहीन हो गई हो, और उसने पाया कि वास्तव में वह तो साँस लेना ही भूल गई थी। उसने अपने डैड की ओर देखा। वे उसे देख मुस्कुराए पर उनका चेहरा उम्मीद से भरा हुआ था। उन्होंने उसके कँधों पर अपनी एक बाँह रख दी। इतने में ऍलन अवतरित हुआ, उसके चेहरे से उसकी वह वाचाल मुस्कुराहट गायब थी, सो सैली ऍन को उसे पहचानने में कुछ समय लगा।

"मैंने सोचा, इसके लिए हम सबको साथ होना चाहिए," कहकर वह अपने पिता के करीब खड़ा हो गया, जिन्होंने अपनी दूसरी बाँह उसके कन्धे पर रख दी। माँ ने भी अपने दोनों बच्चों को सहलाया। सैली ऍन की रीढ़ में एक झुनझुनी-सी दौड़ गई। हवा में एक बिजली-सी कौंध गई। तभी उसने ऍलन को देखा और उसे ताज्जुब हुआ कि उसके सिर के बाल खड़े होने लगे थे। उसने महसूस किया कि खुद उसके बाल भी खड़े होने लगे हैं। जब उसने अपनी नज़रें उठाकर अपने चारों ओर देखा तो पाया कि जिन-जिन के बाल जिस किसी विध लम्बे थे, उन सबों के साथ ऐसा ही हो रहा था।

"डैड?" थोड़ी डरी-डरी वह बोली। "मम्मी?"

"स्थैतिक बिजली," डैड शान्त कराते हुए बोले। उनकी आवाज़ में अचरज की एक भनक थी। "समाचारों में वे हमें इस बाबत चेताते रहते हैं, याद है? ऐसा विद्युत क्षेत्र के चलते होता है।"

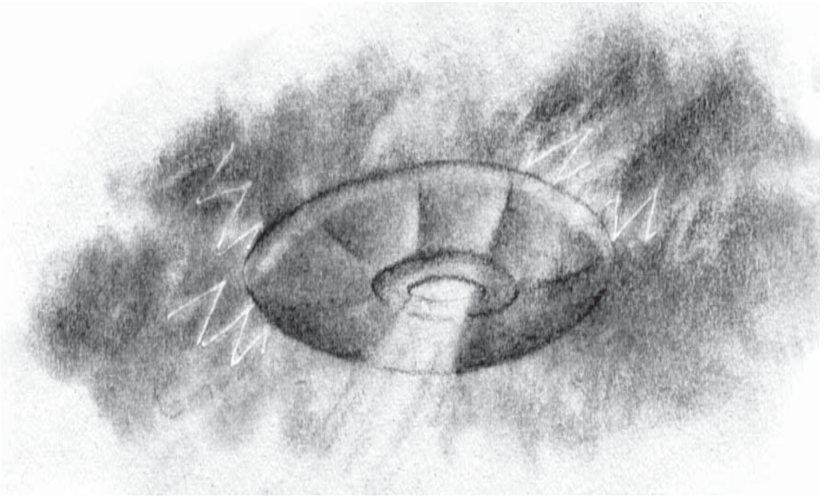

अचानक सैली ऍन को याद आया कि उसने स्थैतिक प्रभाव के बारे में सुना था, और उसकी हँसी फूट पड़ी - अजीब नज़ारा था, सब लोगों के बाल कदमताल में खड़े हुए थे। यहाँ तक कि डॉक्टर की बीवी मिसेज़ ब्रैडी के भी, जो यूँ तो हमेशा अकड़ू रहती थीं। आपने कभी सोचा न होगा कि कोई भी चीज़, बिजली तक भी, उनकी अकड़ को टाँय-टाँय फिस्स कर सकती है। लेकिन ऐसा लग रहा था कि मिसेज़ ब्रैडी को अपनी उड़ती ज़ुल्फों की कोई हवा तक न थी। वे ऊपर आसमान को तक रही थीं, और अभी वे बिलकुल भी ऐंठू न लग रही थीं – बल्कि अचम्भित दिख रही थीं। सैली ऍन की आँखों ने श्रीमती ब्रैडी की ऊपर लगी टकटकी का अनुसरण किया, और देखते ही वह डॉक्टर की पत्नी को सिरे से भूल गई। मैदान के ऊपर निचले सुरमई बादलों में से सफेद रंग की कोई बड़ी चीज़ बाहर की ओर आ रही थी। सैली ऍन एकटक घूर रही थी – भीड़ का हर व्यक्ति अपलक देख रहा था, यहाँ तक कि मंच पर बिराजे गणमान्य भी। वह सफेद वस्तु एक विशाल, चांदी जैसे रंग की तश्तरी का किनारा थी। उसमें से नीले, सफेद और बैंगनी रंग की बिजली की निऑन तरंगें, उसकी सतह के आरपार कौंध-कौंध कर बुझी जा रही थीं। जैसे-जैसे वह तश्तरी बादलों में से उतरती आती, उसका ज़्यादा और ज़्यादा हिस्सा दृश्यमान होता जाता।

“हे भगवान,” सैली ऍन को अपने पीछे से अपनी माँ की फुसफुसाहट सुनाई दी, “हे भगवान!”

बरास्ता बादलों के वह यान सिर के कोई पचास मीटर ऊपर मण्डरा रहा था। आकार में वह समूचे चौक के मुकाबले बड़ा था और सूरज की अधिकांश रोशनी को उसने रोक रखा था। इसके बावजूद नीचे खड़े लोग स्तब्ध हो उसे ताकते रहे। यान भी एकदम चुप था, सिवाय उसकी सतह पर तिरती बिजली की हल्की-सी तड़तड़ के। क्रमश: वह तड़तड़ भी जाती रही। सैली ऍन को नामालूम कितनी देर यह तमाशा चला, लेकिन ऊपर उड़ रहे उस श्वेत यान-पेटे की ऐन आखिरी, लहरिया विद्युत तरंग के भस्म होते ही यान के पेंदे से दूधिया रोशनी का एक बड़ा पुंज निकल नीचे मैदान पर आ पड़ा। संगमरमर के खम्भे सरीखा अ-पारदर्शी वह प्रकाश-स्तम्भ वहीं खड़ा रहा, और तभी सैली ने देखा कि उसके भीतर कुछ चल रहा है। और फिर भीतर चल रही वह चीज़ बाहर निकली और मैदान के बीचो बीच खड़ी हो गई और हज़ारहा विस्फारित आँखें उसे निहार रहीं थीं। और फिर दूधिया रोशनी का वह स्तम्भ गायब हो गया, अपने पीछे उस चीज़ को वहीं छोड़, जो अपने इन नए आतिथेयों के बीच आ खड़ी थी।

वह तीन मीटर से भी ज़्यादा ऊँची थी, और उसका आकार उन पुआलों जैसा था जो सैली ऍन ने अपने नाना-नानी के फोटो-ऍल्बम में देखे थे। शिकंजों जैसी मोटी बाँहें उस पुआल से बाहर को झूल रहीं थीं, और पूरी-की-पूरी वह रचना, विशाल वृक्षों के ठूँठों जितने चौड़े पर कद में छोटे पैरों पर खड़ी थी। पुआल के ऊपरले हिस्से से निकली थी एक लम्बी, मोटी, साँप जैसी कृति जो गर्दन ही हो सकती थी, और जो एक बहुत बड़े फुटबॉल के आकार जैसे सिर को थामे थी। वह जीव एक प्रकार के हरे रंग में रंगा था। मीटर-लम्बी उसकी गर्दन कुण्डलाकार थी, और टेनिस गेंदों के आकार की उसकी दो पीली आँखें मैदान को टुकुर-टुकुर देख रहीं थीं। अभी तक कहीं कोई आवाज़ न थी। मैदान में खड़े सारे जीव एक-दूसरे को देख खामोश खड़े थे। मंच के गणमान्य डरे-सहमे दिख रहे थे। किसी ने भी यत्न न किया उसके समीप जाने का जो साफ तौर पर शरणार्थियों का प्रवक्ता था।

एक क्षण को तो कोई भी हिला-डुला तक नहीं। फिर, घनी गहन शान्ति में सैली ऍन ने पैरों की आवाज़ सुनी, और भीड़ में से एक आकृति उभरी। वह मिसेज़ मार्ली थीं। वह चलकर मैदान के बीचो बीच पहुँचीं और फिर नज़रें घुमा चारों ओर देखने लगीं। फिर उन्होंने जब यह देखा कि हर कोई कितना चुप अचल था, तब फिर उनने अपनी नज़रें उठा उस जीव को देखा, और मुस्कुरा दीं। मिसेज़ मार्ली एक बड़ा परात लिए हुए थीं जिस पर स्कोनों और ड्राइफ्रूट केकों (रॉक बन्स) का ढेर लगा हुआ था। थाल हाथ में लिए वे चलती रहीं

जब तक कि उस अजनबी जीव के ठीक सामने न पहुँच गईं। फिर उन्होंने अपनी नज़रें उठाईं, कद में वे इतनी छोटी थीं कि आँख से आँख मिलाने के लिए उन्हें अपनी गर्दन ऊँची करनी पड़ी।

"आपको लगता होगा कि हम भयानक रूप से असभ्य हैं," मिसेज़ मार्ली बोलीं। "क्या आप मेरा बनाया हुआ कोई स्कोन खाना पसन्द करेंगे? उन पर पहले से ही मक्खन लगा हुआ है।"

बड़े शिकंजों में से एक आगे बढ़ कर मुड़ा, और उसका पतला वाला सिरा उस प्लेट के ऊपर मखमली अन्दाज़ में मण्डराने लगा, जो प्लेट मिसेज़ मार्ली ने उसकी दिखाई के लिए थामी हुई थी। उसके बाद वह जीव एक सुनहरा गेहुँआ स्कोन उठाकर अपने ओष्ठहीन मुँह तक ले आया, और फिर अपने बहुतेरे तीखे दाँत दिखाते हुए उसे शिष्टाचारपूर्वक कुतरने लगा।

"अरे वाह!" जीव बोला। "कितना स्वादिष्ट स्कोन!"

उसकी आवाज़ एक बहता संगीत थी जैसे।

"हवा सरीखी हल्की!" वह बोला। "क्या यह आपकी रेसिपी है?"

"मेरी माँ की," एक नई दुनिया पर

इस जीत की खुशी को भरपूर छुपाते हुए, गर्व से मिसेज़ मार्ली बोलीं।

"मुझे आपसे यह रेसिपी लेनी ही पड़ेगी," जीव बोला। "मेरे स्कोन एकदम पत्थर जैसे बनते हैं। वे कभी फूलकर कुप्पा होते ही नहीं।"

"मुझे लगता है कि आपको ज़्यादा बेकिंग सोडा वापरना चाहिए," मिसेज़ मार्ली बोलीं।

जीव ने एक और चुग्गा लिया, और चौक के चारों ओर फिर एक नज़र डाली।

"यहाँ मेरी मुलाकात कुछ लोगों से होनी है," वह बोला। "हमें यहाँ आने के लिए कहा गया था। हम शरणार्थी हैं। आप जानती हैं कि हम शरणार्थी हैं। हमारा ग्रह दुर्घटनाग्रस्त हो गया है।"

"ओह, सचमुच," मिसेज़ मार्ली ने कहा, "निश्चित ही, मैं आपके बारे में सब जानती हूँ।" जो कि असल में एक अतिशयोक्ति थी - हालाँकि शायद नहीं भी - निश्चित ही मिसेज़ मार्ली ने अभी-अभी वह सब जान लिया था जो नवागन्तुकों को लेकर उन्हें जानना ज़रूरी था।

मिसेज़ मार्ली ने मंच पर बिराजे सन्दिग्ध राजनेताओं की ओर सिर हिलाकर कहा। "मैं मानकर चलती हूँ कि उन सूटबूटधारियों से आपको मिलना है," वे बोलीं। "लेकिन जब आपका काम खत्म हो जाए, तब आप अपने लोगों को उस हॉल में लिवा लाएँ। वहाँ सबके लिए प्रचुर मात्रा में अच्छे-अच्छे ज़ायके रखे गए हैं और हम सब उन ज़ायकों पर एक-दूसरे के बारे में कुछ-कुछ तो जान ही सकते हैं। मुझे यकीन है कि आयरलैंड में आप सबका खूब स्वागत है, और मैं आपसे बाद में बात करूँगी। क्या आप एक और स्कोन लेना पसन्द करेंगे, अगर व्याख्यान कुछ लम्बा चले तो? सफर के बाद आप को भूख भी लग रही होगी।"

"हाँ, मुझे थोड़ी भूख तो लगी है," जीव ने माना। "लेकिन यदि मुमकिन हो तो, इस बारी मैं रॉक बन/केक खाऊँगा। वे खूबसूरत दिख रहे हैं।" उसके अतिरिक्त शिकंजे ने एक रॉक बन उठा लिया। "बाद में हम निश्चित ही बात करेंगे, मैडम," जीव बोला। "इसके लिए मैं प्रतीक्षारत हूँ।"

मिसेज़ मार्ली ने हामी भरी और अपनी प्लेट लिए मुड़ चलीं। वह जीव भी, बारी-बारी से उन छोटे केकों का स्वाद लेते हुए मंच की ओर चलने लगा जहाँ बिराजे राजनेता हौले-हौले अपने होशोहवास में लौटने लगे थे। लोगों का हुजूम भी अपनी रोकी हुई साँसें छोड़ता लग रहा था। सैली ऍन को सहसा महसूस हुआ कि उसके मुँह से जैसे एक विशाल मूर्ख मुस्कुराहट-सी फट पड़ी है, और ज्योंही उसने चारों ओर अपनी नज़रें घुमाईं तो पाया कि सबों के चेहरों पर ऐसी ही मुस्कुराहट विराजमान थी, यहाँ तक कि मैट मार्टिन के चेहरे पर

भी। सैली ने जब अपने मम्मी-डैडी की ओर देखा तो देखा कि वे भी मुस्कुराते-मुस्कुराते एक-दूसरे को देख रहे हैं। उधर ऍलन उस जीव को घूरे जा रहा था।

"वह शर्तिया एक अच्छा पहलवान होगा," वह बोला। यह तारीफ थी।

भीड़ फिर से शोर मचाने लगी थी क्योंकि लोग उत्तेजित हो बातें करने लगे थे। लगता है अपनी इस चहचहाहट में वे सिर के ऊपर उस महायान के बेआवाज़ मण्डराने की बात लगभग भूल ही गए थे। अपने आप में मुस्कुराती हुईं मिसेज़ मार्ली स्कोन्स और रॉक बन्स से भरा हुआ थाल उठाए-उठाए 'अनुदार भवन' को वापस चलती बनीं। हर कदम पर उनका वह थाल हल्का होता रहा, जैसे-जैसे बच्चे और बड़े, सब उसमें सजे व्यंजनों का स्वाद लेते रहे। मिसेज़ मार्ली ने पर इसका बुरा न माना – वैसे भी खाने का समय हो ही गया था। उसी वक्त कोई आकर उनसे बुरी तरह भिड़ चला, इतनी बुरी तरह कि उनका थाल था कि गिरते-गिरते बचा। अधीर होकर उनने अपने होंठ चटकाए। "उई माँ," यह सोच कि उनके एक रॉक-बन के लिए मचलता कोई बच्चा उतावला हुआ जा रहा है, वे बोलीं। "अरे भई सम्भल के।"

लेकिन जब वे पलटीं तो क्या देखती हैं कि ये तो इस अवसर पर अपनी नकली बत्तीसी लगाईं मिसेज़ कूम्ब्स थीं।

"देखा, अपने शहर के लिए आज का दिन कितना महान है, मैरी एलेन," मिसेज़ मार्ली ने कहा।

मिसेज़ कूम्ब्स ने अपने कान पर अपना हाथ धर कहा, "हुँ? क्या कहा तुमने? तुम तो जानती हो कि मैं निपट बहरी हूँ।"

तिस पर मिसेज़ मार्ली मुस्कुरा दीं।

जेर्राड वीलन: चार उपन्यासों के लेखक जेर्राड वीलन, युवाओं के लिए लिखने वाले आयरलैंड के सबसे प्रसिद्ध लेखकों में से एक हैं। उन्हें *आइलिस डिलन स्मृति पुरस्कार* और *बिस्टो बुक पुरस्कार* मिल चुका है। उनकी तीन किताबों का चयन *रीडिंग एसोसिएशन ऑफ आयरलैंड पुरस्कार* की शॉर्टलिस्ट में हुआ है जबकि इंटरनैशनल यूथ लाइब्रेरी ने अपनी 'वाइट रेवन्स' सीरीज़ के लिए उनकी एक पुस्तक का चयन किया है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: मनोहर नोतानी: शिक्षा से स्नातकोत्तर इंजीनियर। पिछले कई वर्षों से अनुवाद व सम्पादन उद्यम से स्वतंत्र रूप से जुड़े हैं। भोपाल में रहते हैं।

सभी चित्र: सौम्या मैनन: चित्रकार एवं एनिमेशन फिल्मकार। विभिन्न प्रकाशकों के बच्चों की किताबों एवं पत्रिकाओं के लिए चित्र बनाए हैं। बच्चों के साथ काम करना पसन्द करती हैं।

यह कहानी *जाइंट्स ऑफ दि सन* नामक आयरिश कहानी संग्रह से साभार।

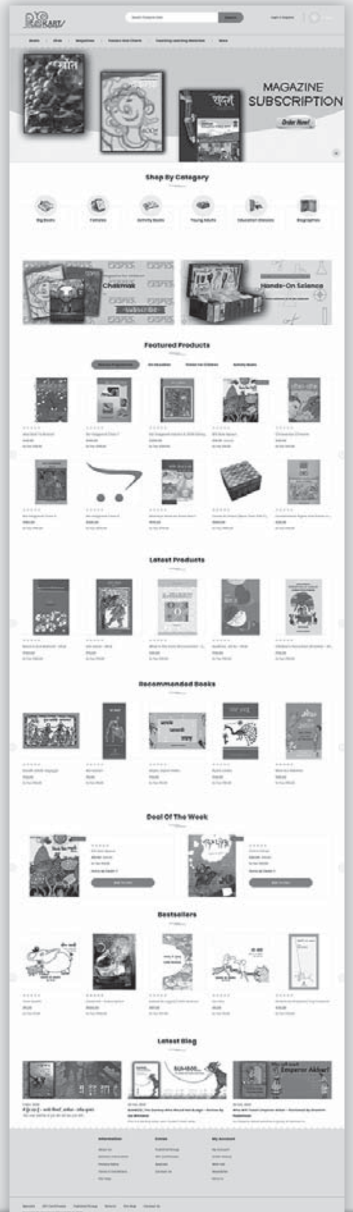

PITA KART
ONE STOP EDUCATION STORE

पिटारा कार्ट

सिंगल क्लिक और आसान सर्च

एकलव्य की किताबें,
पत्रिकाएँ,
टी.एल.एम.,
शैक्षणिक सी.डी.,
चार्ट, पोस्टर
एवं साइंस किट...
आपकी पहुँच में...

जल्द ही देश भर की संस्थाओं और प्रकाशकों की चुनिन्दा सामग्री भी

www.pitarakart.in
पर विज़िट कीजिए।
अपना अकाउंट बनाइए।
आसान खरीदारी और सुरक्षित भुगतान

पिटारा कार्ट पर एकलव्य की किताबों की ई-बुक (E-pub) उपलब्ध हैं।

www.eklavya.in

वर्ष 22 अंक 127-132

शैक्षणिक संदर्भ

अंक: 127

पेड़-पौधे कैंसर से क्यों...	05	बच्चों और बड़ों की किताब...	50
आखिरकार यह शरीर: भाग-6	09	नई शिक्षा नीति और स्कूलों...	59
प्रकाश की गति: भाग-1	15	'नीले लोग' कहानी क्या...	71
गणित का सौन्दर्य: भाग-1	23	मुलाकात	77
मधुमक्खी का दिशा ज्ञान	36	पानी का कोई रंग...	85
व्याकरण की घण्टी	42		

अंक: 128

आपने लिखा	04	गणित और भौतिक जगत...	43
जीवजगत में लिंग निर्धारण...	07	मातृभाषा आधारित बहुभाषी...	58
भविष्य: भाग-7	16	बैंकिंग प्रणाली...	63
हम वैसे ही पढ़ते हैं...: भाग-2	21	शिक्षा में कला का स्थान	75
प्रकाश की गति: भाग-2	32	आदम, एक दोपहर	82

अंक: 129

आपने लिखा	04	प्रकाश की गति, ईथर...: भाग-3	61
विषाणु: उधार की ज़िन्दगी...	07	होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण...	73
हाथ धोने को लेकर	21	एक दिन मन्ना डे	79
प्लेग का टीका, हाफकिन...	37	पानी के बिना जीवित...	88
QED - सत्य की तलाश: भाग-3	45		

अंक: 130

गणितीय फसाना	05	ऑक्सीजन अन्दर या बाहर?	56
छोटे, फिर भी महान:	11	बच्चों का पूर्वज्ञान बनाम...	61
फूलों का खिलना...	17	नंदा मैडम की कक्षा	69
अजगर की शरीर-क्रिया...	25	सूरज के दैत्य	78
प्रतिबिम्ब: वास्तविक या आभासी	34	लौकी की बेल में सफेद फूल...	89
इतिहास: किस काम...: भाग-4	45		

अंक: 131

ये किस हिन्दी का उपयोग...	05	ज्ञान का स्वामित्व और...	53
धोखेबाज़ तितलियाँ	11	महाराष्ट्र के सरकारी...	63
ज़मीनी हकीकत	20	फरिश्तों के चेहरों पर रंग	77
ज़िद्दी सवाल और...: भाग-5	27	पन्नी-प्लास्टिक कैसे बनती है?	90
एक कहानी कई विचार	46		

अंक: 132

आपने लिखा	05	दायाँ या बायाँ	43
घोंघे की खोल में घुमाव...	07	कोरोना काल में बच्चों...	47
शून्य पर समझ	13	अप्रवासी	55
मेरा रोज़नामचा: शिक्षा...: भाग-6	21	इंडेक्स	73
एक फूटा थर्मामीटर	28	चाँद दिन में कहाँ जाता है...?	81
लालाजी के लड्डू...	35		

इंडेक्स देखने का तरीका: छह अंकों में प्रकाशित सामग्री का विषय आधारित वर्गीकरण किया गया है। कई लेखों में एक से ज़्यादा मुद्दे शामिल हैं इसलिए वे लेख एक से ज़्यादा स्थानों पर रखे गए हैं। लेख के शीर्षक और लेखक के नाम के साथ पहले बोल्ड में उस अंक का क्रमांक है जिसमें वह लेख प्रकाशित हुआ है। फुलस्टॉप के बाद उस लेख का पृष्ठ क्रमांक दिया गया है। उदाहरण के लिए लेख 'प्रकाश की गति: भाग-1' **127**.15 का अर्थ है, यह लेख अंक 127 के पृष्ठ क्रमांक 15 पर है।

भौतिकी (Physics)/खगोलशास्त्र (Astronomy)

प्रकाश की गति: भाग-1	अंजु दास मानिकपुरी	**127**.15
प्रकाश की गति: भाग-2	अंजु दास मानिकपुरी	**128**.32
गणित और भौतिक जगत का सम्बन्ध	दीपक धर	**128**.43
प्रकाश की गति, ईथर...: भाग-3	अंजु दास मानिकपुरी	**129**.61
प्रतिबिम्ब: वास्तविक या आभासी?	उमा सुधीर	**130**.34
बच्चों का पूर्वज्ञान बनाम...	माधव केलकर	**130**.61
चाँद दिन में कहाँ जाता है...?	सवालीराम	**132**.81

रसायनशास्त्र (Chemistry)

पानी के बिना जीवित क्यों नहीं...	सवालीराम	**129**.88
लौकी की बेल में सफेद फूल...	सवालीराम	**130**.89
पन्नी-प्लास्टिक कैसे बनती है?	सवालीराम	**131**.90
एक फूटा थर्मामीटर...	गोपालपुर नागेंद्रप्पा	**132**.28

वनस्पतिशास्त्र (Botany)

पेड़-पौधे कैंसर से क्यों नहीं मरते?	स्टुअर्ट थॉम्सन	**127**.05
फूलों का खिलना और मुरझाना	किशोर पंवार	**130**.17
ऑक्सीजन अन्दर या बाहर?	गीता जोशी	**130**.56
लौकी की बेल में सफेद फूल...	सवालीराम	**130**.89

प्राणीशास्त्र (Zoology)/माइक्रोबायोलॉजी

आखिरकार यह शरीर...: भाग-6	चारुदत्त नवरे	127.09
मधुमक्खी का दिशा ज्ञान	मौसमी सेन शर्मा	127.36
जीवजगत में लिंग निर्धारण...	कोकिल चौधरी	128.07
भविष्य: भाग-7	चारुदत्त नवरे	128.16
विषाणु: उधार की ज़िन्दगी...	चेतना खांबेटे	129.07
हाथ धोने को लेकर	अतुल गवांडे	129.21
प्लेग का टीका, हाफकिन...	माधव केलकर	129.37
पानी के बिना जीवित क्यों नहीं...	सवालीराम	129.88
छोटे, फिर भी महान:	माधव गाडगिल	130.11
अजगर की शरीर-क्रिया...	विपुल कीर्ति शर्मा	130.25
ऑक्सीजन अन्दर या बाहर?	गीता जोशी	130.56
धोखेबाज़ तितलियाँ	संकेत राउत	131.11
घोंघे की खोल में घुमाव...	विक्की स्टाईन	132.07

पारिस्थितिकी/जैव-विकास/अनुकूलन/मानव व्यवहार

पेड़-पौधे कैंसर से क्यों नहीं मरते?	स्टुअर्ट थॉम्सन	127.05
आखिरकार यह शरीर...: भाग-6	चारुदत्त नवरे	127.09
मधुमक्खी का दिशा ज्ञान	मौसमी सेन शर्मा	127.36
जीवजगत में लिंग निर्धारण...	कोकिल चौधरी	128.07
भविष्य: भाग-7	चारुदत्त नवरे	128.16
विषाणु: उधार की ज़िन्दगी...	चेतना खांबेटे	129.07
छोटे, फिर भी महान:	माधव गाडगिल	130.11
फूलों का खिलना और मुरझाना	किशोर पंवार	130.17
अजगर की शरीर-क्रिया...	विपुल कीर्ति शर्मा	130.25
धोखेबाज़ तितलियाँ	संकेत राउत	131.11
घोंघे की खोल में घुमाव...	विक्की स्टाईन	132.07
एक फूटा थर्मामीटर.......	गोपालपुर नागेंद्रप्पा	132.28

गणित/अर्थशास्त्र/इतिहास

गणित का सौन्दर्य: भाग-1	शेषागिरी केएम राव	**127**.23
हम वैसे ही पढ़ते हैं...: भाग-2	शेषागिरी केएम राव	**128**.21
गणित और भौतिक जगत का सम्बन्ध	दीपक धर	**128**.43
बैंकिंग प्रणाली के लिए भरोसा...	अरविन्द सरदाना	**128**.63
QED - सत्य की तलाश: भाग-3	शेषागिरी केएम राव	**129**.45
गणितीय फसाना	विवेक कुमार मेहता	**130**.05
इतिहास: किस काम...: भाग-4	शेषागिरी केएम राव	**130**.45
नंदा मैडम की कक्षा	सुधीर श्रीवास्तव	**130**.69
ज़मीनी हकीकत	विवेक कुमार मेहता	**131**.20
ज़िद्दी सवाल और...: भाग-5	शेषागिरी केएम राव	**131**.27
शून्य पर समझ	मनोज कुमार शराफ	**132**.13
मेरा रोज़नामचा: शिक्षा...: भाग-6	शेषागिरी केएम राव	**132**.21
एक फूटा थर्मामीटर...	गोपालपुर नागेंद्रप्पा	**132**.28
दायाँ या बायाँ	अंकित सिंह	**132**.43

बच्चों/शिक्षकों के साथ अनुभव

गणित का सौन्दर्य: भाग-1	शेषागिरी केएम राव	**127**.23
व्याकरण की घण्टी	शारदा कुमारी	**127**.42
बच्चों और बड़ों की किताब...	कमलेश चन्द्र जोशी	**127**.50
हम वैसे ही पढ़ते हैं...: भाग-2	शेषागिरी केएम राव	**128**.21
मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा...	संजय गुलाटी	**128**.58
QED - सत्य की तलाश: भाग-3	शेषागिरी केएम राव	**129**.45
होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण...	कालू राम शर्मा	**129**.73
प्रतिबिम्ब: वास्तविक या आभासी?	उमा सुधीर	**130**.34
इतिहास: किस काम...: भाग-4	शेषागिरी केएम राव	**130**.45
ऑक्सीजन अन्दर या बाहर?	गीता जोशी	**130**.56
बच्चों का पूर्वज्ञान बनाम...	माधव केलकर	**130**.61
नंदा मैडम की कक्षा	सुधीर श्रीवास्तव	**130**.69

ये किस हिन्दी का उपयोग...	उमा सुधीर	**131**.05
ज़िद्दी सवाल और...: भाग-5	शेषागिरी केएम राव	**131**.27
एक कहानी कई विचार	नीतू यादव	**131**.46
ज्ञान का स्वामित्व और नाटक...	मौअज़्ज़म अली	**131**.53
मेरा रोज़नामचा: शिक्षा...: भाग-6	शेषागिरी केएम राव	**132**.21
लालाजी के लड्डू से खुले...	नंदा शर्मा	**132**.35
दायाँ या बायाँ	अंकित सिंह	**132**.43
कोरोना काल में बच्चों की...	शशिकला, गुलाबचंद, सुषमा	**132**.47

समीक्षा/पुस्तक अंश/संस्मरण

गणित का सौन्दर्य: भाग-1	शेषागिरी केएम राव	**127**.23
'नीले लोग' कहानी क्या...	दीपाली शुक्ला	**127**.71
हम वैसे ही पढ़ते हैं...: भाग-2	शेषागिरी केएम राव	**128**.21
QED - सत्य की तलाश: भाग-3	शेषागिरी केएम राव	**129**.45
होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण...	कालू राम शर्मा	**129**.73
इतिहास: किस काम...: भाग-4	शेषागिरी केएम राव	**130**.45
ज़िद्दी सवाल और...: भाग-5	शेषागिरी केएम राव	**131**.27
मेरा रोज़नामचा: शिक्षा...: भाग-6	शेषागिरी केएम राव	**132**.21

भाषा शिक्षण/बाल साहित्य

व्याकरण की घण्टी	शारदा कुमारी	**127**.42
बच्चों और बड़ों की किताब...	कमलेश चन्द्र जोशी	**127**.50
मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा...	संजय गुलाटी	**128**.58
एक कहानी कई विचार	नीतू यादव	**131**.46
महाराष्ट्र के सरकारी-अनुदान...	अरविन्द सरदाना	**131**.63
लालाजी के लड्डू से खुले...	नंदा शर्मा	**132**.35

शिक्षा शास्त्र/विज्ञान शिक्षा

गणित का सौन्दर्य: भाग-1	शेषागिरी केएम राव	**127**.23
व्याकरण की घण्टी	शारदा कुमारी	**127**.42
बच्चों और बड़ों की किताब...	कमलेश चन्द्र जोशी	**127**.50

नई शिक्षा नीति और स्कूलों...	अरविन्द सरदाना	**127**.59
'नीले लोग' कहानी क्या...	दीपाली शुक्ला	**127**.71
हम वैसे ही पढ़ते हैं...: भाग-2	शेषागिरी केएम राव	**128**.21
मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा...	संजय गुलाटी	**128**.58
शिक्षा में कला का स्थान	नंदलाल बसु	**128**.75
QED - सत्य की तलाश: भाग-3	शेषागिरी केएम राव	**129**.45
होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण...	कालू राम शर्मा	**129**.73
प्रतिबिम्ब: वास्तविक या आभासी?	उमा सुधीर	**130**.34
इतिहास: किस काम...: भाग-4	शेषागिरी केएम राव	**130**.45
ऑक्सीजन अन्दर या बाहर?	गीता जोशी	**130**.56
बच्चों का पूर्वज्ञान बनाम...	माधव केलकर	**130**.61
नंदा मैडम की कक्षा	सुधीर श्रीवास्तव	**130**.69
ये किस हिन्दी का उपयोग...	उमा सुधीर	**131**.05
ज़िद्दी सवाल और...: भाग-5	शेषागिरी केएम राव	**131**.27
एक कहानी कई विचार	नीतू यादव	**131**.46
ज्ञान का स्वामित्व और नाटक...	मौअज़्ज़म अली	**131**.53
महाराष्ट्र के सरकारी-अनुदान...	अरविन्द सरदाना	**131**.63
शून्य पर समझ	मनोज कुमार शराफ	**132**.13
मेरा रोज़नामचा: शिक्षा...: भाग-6	शेषागिरी केएम राव	**132**.21
लालाजी के लड्डू से खुले...	नंदा शर्मा	**132**.35
दायाँ या बायाँ	अंकित सिंह	**132**.43
कोरोना काल में बच्चों की...	शशिकला, गुलाबचंद, सुषमा	**132**.47

कहानी

मुलाकात	रिनचिन	**127**.77
आदम, एक दोपहर	इतालो कैल्विनो	**128**.82
एक दिन मन्ना डे	कुमार अंबुज	**129**.79
सूरज के दैत्य	सैम मॅक्ब्रेट्नी	**130**.78
फरिश्तों के चेहरों पर रंग	मार्क ओ'सुलीवन	**131**.77
अप्रवासी	जेर्राड वीलन	**132**.55

सवालीराम

पानी का कोई रंग क्यों नहीं होता है?	सवालीराम	**127**.85
पानी के बिना जीवित क्यों नहीं...	सवालीराम	**129**.88
लौकी की बेल में सफेद फूल...	सवालीराम	**130**.89
पन्नी-प्लास्टिक कैसे बनती है?	सवालीराम	**131**.90
चाँद दिन में कहाँ जाता है...?	सवालीराम	**132**.81

हर बाउंड वॉल्यूम में सिमटे हैं सात रंग

भौतिकी, रसायन, गणित
वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान
इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र
बच्चों-शिक्षकों के साथ अनुभव
पुस्तक समीक्षा, पुस्तक अंश
इंटरव्यू, आत्मकथा, जीवनी
कहानी, भाषा शिक्षण, शिक्षा शास्त्र

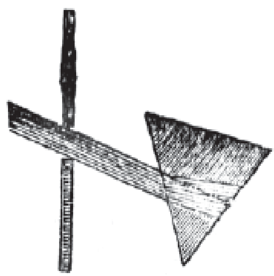

संदर्भ में अब तक प्रकाशित सामग्री 22 बाउंड वॉल्यूम में उपलब्ध है।
हरेक बाउंड वॉल्यूम का मूल्य 300 रुपए।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क कीजिए

पिटारा, एकलव्य
जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी,
भोपाल, म.प्र. पिन 462026
फोन: 0755 - 2977770, 2977771
ई-मेल: pitara@eklavya.in
www.pitarakart.in

सवालीराम

सवाल: चाँद दिन में कहाँ जाता है, सूरज रात में कहाँ जाता है?

- माध्यमिक शाला, मानिकपुर आश्रमशाला, ज़िला-अमरावती, महाराष्ट्र

जवाब: हमारी दिनचर्या दिन और रात के चक्र के अनुसार निर्धारित हुई है। क्या आपने कभी ये सोचा है कि चाहे दुनिया में कुछ भी क्यों न हो जाए, दिन और रात होने की प्रक्रिया बिलकुल वैसी ही चलती रहती है? तो सवाल बहुत ही वाजिब है कि दिन-रात का क्रम इतनी मुस्तैदी से कैसे चलता है। यह जानना रोचक होगा कि आखिर ये दिन-रात होते कैसे हैं। या फिर सूर्य आखिर कहाँ चला जाता है? हम यही मानते हैं कि जब आकाश में सूर्य दिखाई दे, तब दिन होता है और जब सूर्य दिखाई न दे तब रात हो जाती है। लेकिन सवाल यह है कि सूर्य कुछ ही समय क्यों दिखाई देता है? इसका कारण पृथ्वी की गति से जुड़ा है।

सूरज का प्रकाश

सूरज के प्रकाश और पृथ्वी की गति से तो आप परिचित ही होंगे। पृथ्वी बाकी ग्रहों की तरह अपनी चाल से सूर्य की परिक्रमा करती है। पृथ्वी न केवल सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है बल्कि अपनी धुरी पर भी लगातार घूमती रहती है। पृथ्वी सूर्य के चारों तरफ एक चक्कर लगाने में 365 दिन 6 घण्टे 48 मिनट और 45.51 सेकण्ड का समय लेती है और अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा करने में पृथ्वी को 24 घण्टे (23 घण्टे, 56 मिनट और 4.09 सेकण्ड) का समय लगता है।

अपनी धुरी पर घूमते हुए सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते समय, लगभग गोल आकार की पृथ्वी का आधा हिस्सा ही सूर्य के सामने रह पाता है जिस पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है। इसी प्रकाशमान हिस्से पर दिन होता है और पृथ्वी का जो बाकी आधा हिस्सा सूर्य के प्रकाश से वंचित रह जाता है, उस पर अँधेरा होने के कारण रात हो जाती है। आप इस को ऐसे भी समझ सकते हैं कि आप एक गेंद लें जिस पर पेन से एक जगह बिन्दु बनाएँ। अब एक अँधेरे कमरे में गेंद पर टॉर्च से रोशनी डालें। टॉर्च को सूर्य मानें, और बिन्दु वह जगह है जहाँ आप खड़े हैं। क्या उस बिन्दु पर प्रकाश पड़ रहा है? यदि पड़ रहा है तो इस अवस्था को दिन कहेंगे। अब गेंद को ऐसे घुमाएँ कि वह बिन्दु दूसरी ओर चला जाए। अब टॉर्च यानी सूर्य का प्रकाश उस बिन्दु पर नहीं पड़ेगा, अतः वहाँ अँधेरा होगा।

इस तरह सूर्य तो अपनी जगह पर है, केवल गेंद यानी पृथ्वी के घूमने के कारण हमें वह दिखाई नहीं देता। पृथ्वी घूमती रहती है और सूर्य दृश्य-अदृश्य होता रहता है। इसका मतलब है कि पृथ्वी के किसी-न-किसी हिस्से (लगभग आधे हिस्से) में हर वक्त दिन होता है। बात सिर्फ इतनी है कि हम उस हिस्से में हैं या नहीं।

चन्द्रमा का दिखना

अब चन्द्रमा को देखें। आपने देखा होगा कि कई दिन ऐसे होते हैं जब चन्द्रमा दिन में भी दिखाई पड़ता है और कई रातों को भी दिखाई नहीं पड़ता। कारण यह है कि चन्द्रमा की गति थोड़ी जटिल है। चन्द्रमा न सिर्फ पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाता है बल्कि पृथ्वी के साथ-साथ सूर्य के चक्कर भी लगाता है। और अपनी धुरी पर तो घूमता ही है। इसलिए कई बार वह हमारे सामने होता है तो कई बार हमारे सामने नहीं होता। लेकिन ज़रूरी नहीं कि वह दिन में ओझल हो ही जाए।

चाँद की कलाएँ

चन्द्रमा की एक विशेषता और है। चन्द्रमा की आकृति दिन-ब-दिन बदलती है। सूर्य तो हमेशा पूरा गोला दिखता है लेकिन चन्द्रमा कभी पूरा गोला, कभी आधा गोला, तो कभी एक गोलाकार लकीर जैसा दिखता है। इन्हें चाँद की कलाएँ कहते हैं। चन्द्रमा सूर्य की रोशनी पड़ने से चमकता है और उस रोशनी के चन्द्रमा की सतह से परावर्तित होने के कारण हमें यहाँ पृथ्वी पर दिखाई देता है। एक बार

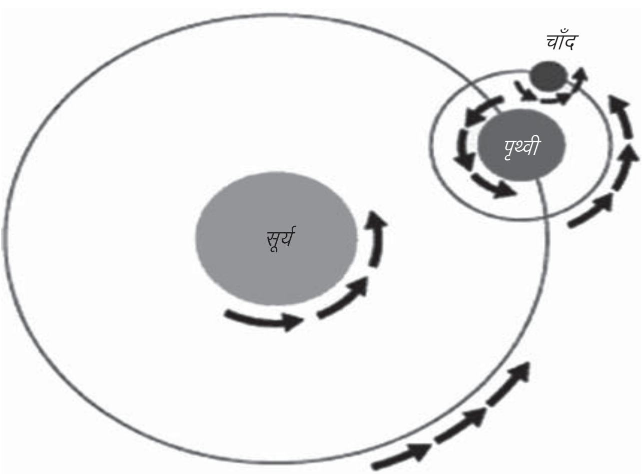

चित्र-1: *चन्द्रमा पृथ्वी के साथ-साथ सूर्य के भी चक्कर लगाता है।*

सूरज कहीं नहीं जाता

सवालीराम ने जो आपको बताया, वह काफी हद तक वैज्ञानिक व्याख्यानुमा है। लेकिन जब 10-12 बरस के बच्चों से इस मुद्दे पर बातचीत करते हैं तो बच्चे वास्तव में क्या सोच रहे होते हैं, इसके बारे में पता चलता है। बच्चों के लिए पृथ्वी की दैनिक या वार्षिक गति के बारे में समझ बना पाना थोड़ा कठिन काम है। हमने महाराष्ट्र की आश्रमशालाओं के कुछ बच्चों के साथ और होशंगाबाद फील्ड सेंटर की लाइब्रेरी में कुछ बच्चों के साथ 'रात में सूरज कहाँ चला जाता है' विषय पर बातचीत की। इस बातचीत की शुरुआत हम बच्चों से यह कहकर करते थे कि वे एक कागज़ पर दिन के समय के आसमान का चित्र बनाकर दिखाएँ। बच्चों द्वारा बनाए चित्रों में अक्सर सूरज, सफेद या काले बादल, हवाई जहाज़, पक्षी आदि होते थे।

फिर उनसे कहा जाता था कि अब वे रात के आसमान का चित्र बनाकर दिखाएँ। बच्चों के बनाए चित्रों में तारे, चाँद, रात के पक्षी, बादल, हवाई जहाज़ आदि होते थे। इन चित्रों में कभी चाँद पूनम का होता, तो कभी कटा हुआ।

यहाँ से हम चर्चा को आगे बढ़ाते थे कि रात के आसमान में सूरज क्यों नहीं बनाया, सूरज कहाँ चला गया? यहाँ बच्चों को थोड़ी उलझन होती थी। वे हाथों के इशारों से बताने की कोशिश करते थे कि सूरज यहाँ होता है, चाँद यहाँ होता है। तब हम बच्चों को ग्लोब व गेंद वगैरह देकर कहते कि "क्या इनकी मदद से अपनी बात बताना चाहोगे?" ज़्यादातर बच्चे ग्लोब व गेंद की मदद से भूगोल या विज्ञान की किताबों में दिए चित्र (जिसमें धरती द्वारा सूरज का चक्कर लगाते समय 21 जून, 23 सितम्बर, 23 दिसम्बर, 21 मार्च की स्थितियाँ दर्शाई गई होती हैं) को दोहरा रहे होते। दो-तीन बच्चों ने ग्लोब को धुरी पर घुमाते हुए दिन-रात का होना भी बताया और कहा कि "देखिए सूरज बीच में है। पृथ्वी घूम रही है।" दो-तीन बच्चों ने यह भी कहा कि रोज़ सुबह सूरज उगकर आसमान में चढ़ता जाता है और फिर डूबकर नीचे-नीचे चलता हुआ वहीं पहुँच जाता है जहाँ से उसे अगले दिन उगना है।

बच्चों के साथ इस मुद्दे पर और बातचीत से यह समझ आता है कि पृथ्वी की दैनिक गति (अपनी धुरी पर घूमना) और वार्षिक गति (साल भर में सूरज का चक्कर लगाना) की समझ पुख्ता न होने पर भी बच्चे यह मानते हैं कि सूरज कहीं नहीं जाता, वो बीच में रहता है।

-माधव केलकर

फिर, किसी भी समय चाँद के आधे भाग पर तो सूर्य का प्रकाश हमेशा पड़ता रहता है और वह चमकता रहता है। लेकिन चमकता आधा गोला पूरा-का-पूरा हमारी ओर नहीं होता। उसका एक हिस्सा ही हमारी ओर होता है और इसलिए हमें दिखता है कि चाँद की कलाएँ बदल रही हैं। चाँद की बदलती आकृतियों को 'चाँद की कलाएँ' कहते हैं।

पूर्णिमा से अमावस्या के बीच के दिनों में पृथ्वी पर चन्द्रमा के दिखाई देने वाले भाग का आकार रोज़ाना घटता जाता है। उसी प्रकार अमावस्या से पूर्णिमा के बीच के दिनों में चन्द्रमा के दिखाई देने वाले भाग का आकार रोज़ाना बढ़ता रहता है।

अन्त में

अब आप जान गए होंगे कि दिन और रात होने के क्या कारण हैं - पृथ्वी की गति। चूँकि पृथ्वी की गति नियमित है इसलिए दुनिया में होने वाली किसी भी हलचल से ये प्रक्रिया अप्रभावित रहती है। सूर्य कहीं नहीं जाता बल्कि पृथ्वी ही घूम जाती है।

कोकिल चौधरी: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

इस बार का सवाल

सवाल: ट्यूबलाइट शुरू होने पर 'हम्म्म' की आवाज़ क्यों आती है?

- माध्यमिक शाला, मानिकपुर आश्रमशाला, ज़िला-अमरावती, महाराष्ट्र

इस सवाल के बारे में आप क्या सोचते हैं, आपका क्या अनुमान है, क्या होता होगा? इस सवाल को लेकर आप जो कुछ भी सोचते हैं, सही-गलत की परवाह किए बिना लिखकर हमें भेज दीजिए। सवाल का जवाब देने वाले पाठकों को *संदर्भ* **की तीन साल की सदस्यता उपहार स्वरूप दी जाएगी।**

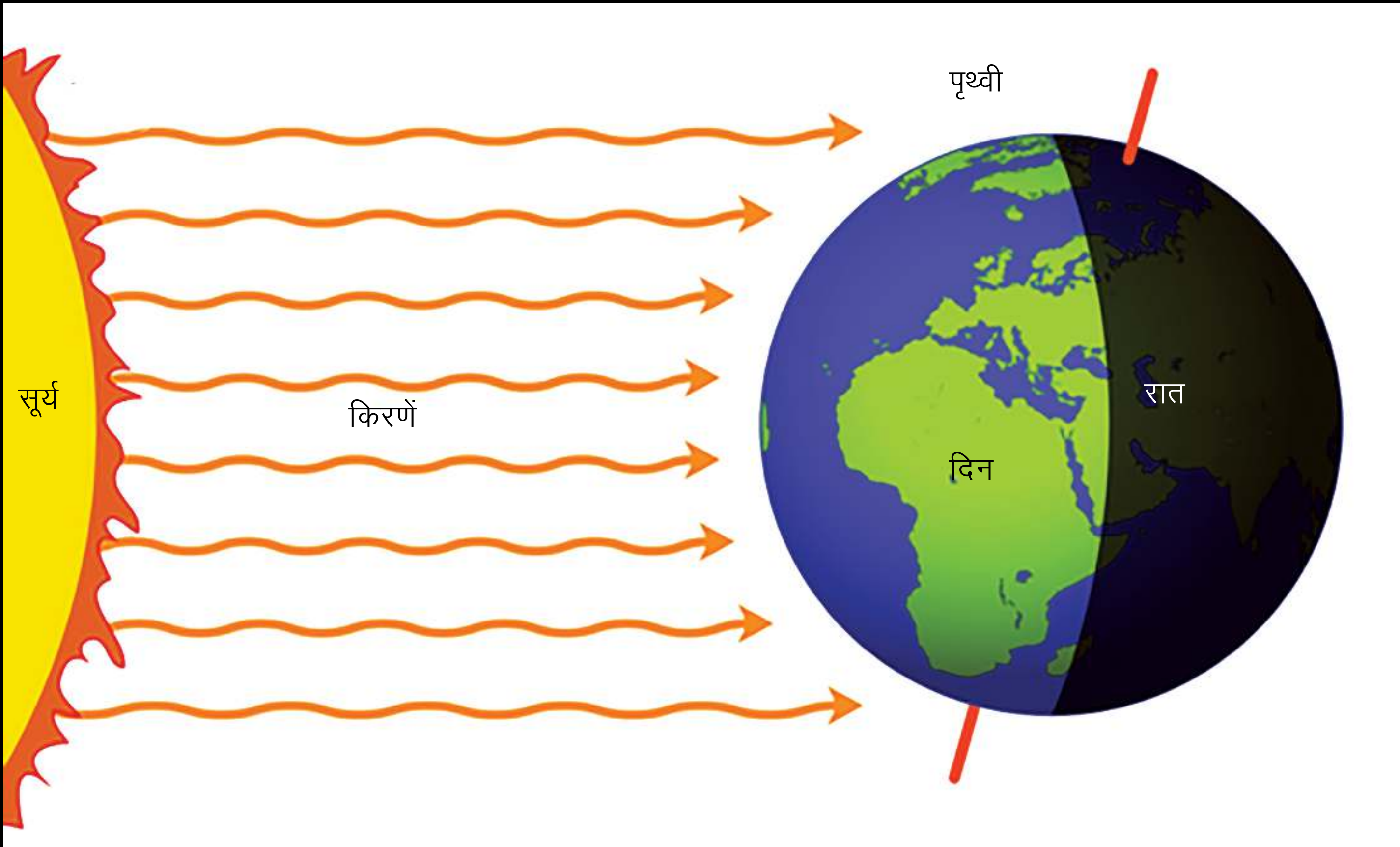
पृथ्वी
सूर्य
किरणें
रात
दिन

RNI No.: MPHIN/2007/20203

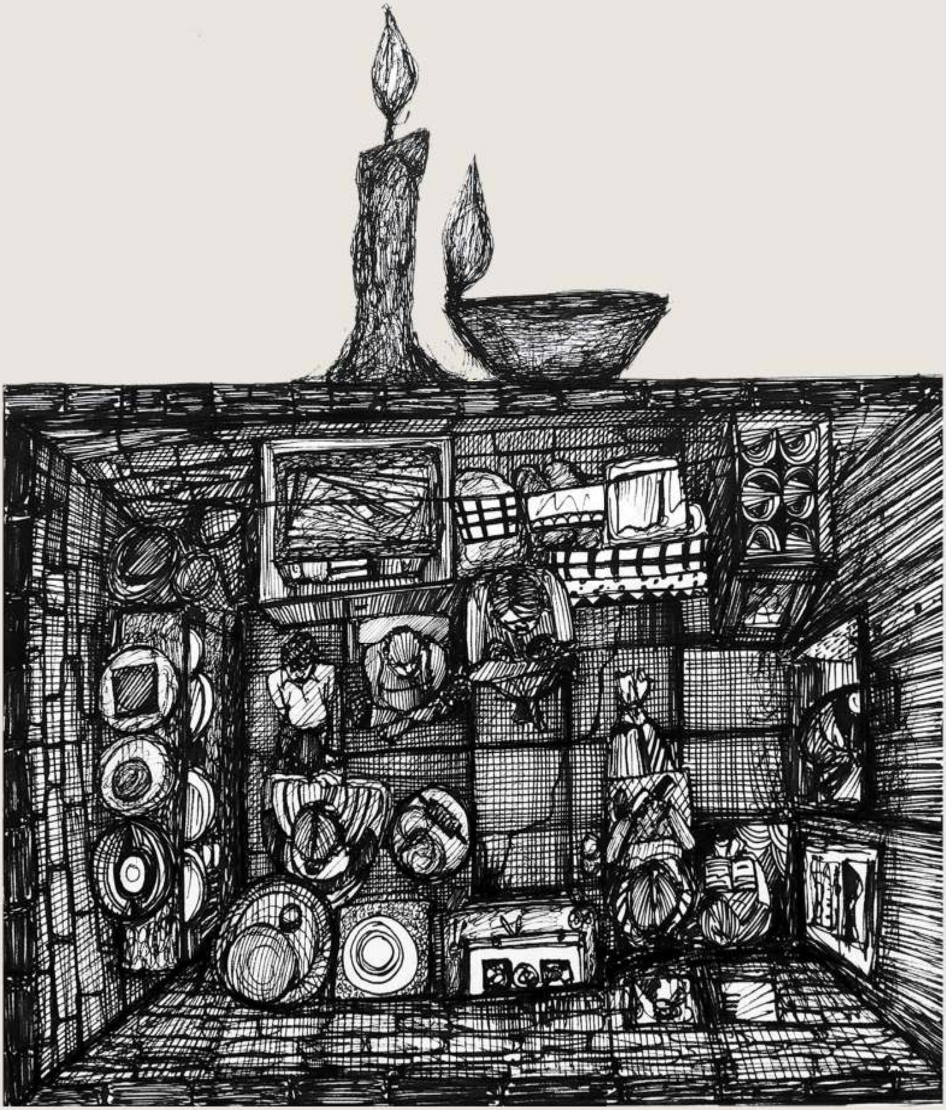

प्रकाशक, मुद्रक, राजेश खिन्दरी की ओर से निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन,
जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल - 462 023 (म.प्र.) द्वारा
एकलव्य से प्रकाशित तथा भण्डारी ऑफसेट प्रिंटर्स, ई-3/12, अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.) से मुद्रित, सम्पादक: राजेश खिंदरी।